अमरसिंह

(वीररस पूर्ण ऐतिहासिक नाटक)

आचार्य चतुरसेन

प्रभात प्रकाशन
दिल्ली मथुरा

प्रकाशक
प्रभात प्रकाशन
दिल्ली

•

लेखक
आचार्य चतुरसेन

•

नवम्बर '६०

•

मुद्रक
जवाहर प्रिंटिंग प्रेस
नौगजा मथुरा

•

मूल्य
दस रुपया

प्रकाशक
प्रभात प्रकाशन
दिल्ली

लेखक
आचार्य चतुरसेन

•

नवम्बर ६०

•

मुद्रक
जवाहर प्रिंटिंग प्रेस
मोहल्ला मथुरा

मूल्य
[illegible] रुपया

परिचय

अमरसिंह राठौर का जीवन दमाग र पूरा जीवन का ार परम कीर्ति का उत्तम उदाहरण है । सब म म भग र वन पूर्व यह उद्धार जाति वाग्य की जैसा उ ू ट थ गा पर पहुंचा पुरी भी आज उसका हम विचार भी नहीं कर सकते । महापुरुष नाम न कहा है— त्याग मनुष्य की उच्चता है परन्तु प्राणों का त्याग सब त्यागों म श्र ष्ठ है । उसी प्राण का क्षत्रिय मनायास हा युद्ध भूमि म त्याग द ा है इसलिये क्षत्रियत्व मान वीर जाति का सर्वोच्च विराम है ।

अमरसिंह की जन्म सम्वत् १६ ७ विक्रमी की है । उस समय राठौरा की राजगद्दी नागौर म थी । अमरसिंह क पिता महाराज गजसिंह जोधपुर क महाप्रतापी और वीर राजा थ । उन्होंन जहाँगीर बादशाह क लिय ५२ युद्ध विजय किय थ और पाँच हजारी जात तथा पाँच हजार सवार का मनसब था स्थान तथा महाराज की पदवी शाही दरबार म प्राप्त की थी । बादशाह न उनक घाटों पर मुहर लगाना माफ कर दिया था । य अग ीर थ धन ही दानी भी थ । उन्होंन १६ नदियों का १४ लाख रुपय दान दिय थ । जागीर का साग गजसिंह नदियों और योगों का दान म प गाली ाना ना था ।

इन महाराज के तीन पुत्र हुए जिनमें सबसे बड़े अचलसिंह जी बाल्यावस्था में ही मर गये। यह मझले महाराज अमरसिंह थे। छोटे प्रबल प्रतापी जसवन्तसिंह थे जिनकी तलवार का लोहा भारत भर माना गया था।

संवत् १६८६ में महाराज गजसिंह जी लाहौर बादशाह जहाँगीर के साथ में गये। यहाँ वे अमरसिंह को भी ले गये थे और बादशाह से बहुत कुछ कह कर उन्होंने उनके लिए जुदा मनसब और ढाई हज़ार सवार रुपया नागौर की जागीर उनके नाम लिखवा दी थी तथा जोधपुर राज्य का उत्तराधिकारी अपने छोटे पुत्र जसवन्तसिंह को बना लिया था।

अमरसिंह अत्यन्त उद्धत स्वभाव के थे। वे बड़े हठी, बात के धनी और उग्र प्रकृति के पुरुष थे। उनके उद्धत स्वभाव से नाराज़ होकर एक बार महाराज गजसिंह जी ने राज्याधिकार से अलग कर दिया और उन्हें देश त्याग देने की आज्ञा दे दी। यह घटना विक्रमी संवत् १६६ की है। इस पर अमरसिंह जी लाहौर चले आये और बादशाह शाहजहाँ के दरबार में रहने लगे। इस घटना के थोड़े दिन बाद महाराज गजसिंह जी आगरे आए और अचानक बहुत बीमार हो गए। उनके बचने की आशा न रही। तब स्वयं बादशाह उन्हें देखने आये। तब महाराज ने अपने कनिष्ठ पुत्र जसवन्तसिंह को अपना उत्तराधिकारी स्वीकार कर लेने के लिए बादशाह से और अन्य सर्दारों से अनुरोध किया। उन्होंने महाराज का यह अनुरोध स्वीकार कर लिया और बादशा

से जसवन्तसिंह को चार हजारी जात व तीन हजारी सवारों का मनसब और खिलअत देकर मारवाड़ का राज्य सौंप दिया। अमरसिंह को तीन हजारी जात और तीन हजारी सवारों का मनसब देकर महाराव की उपाधि दी। साथ ही नागौर की जागीर का परवाना भी दे दिया। इसके बाद शीघ्र ही महाराज गजसिंह की मृत्यु हो गई।

उस समय अमरसिंह की आयु २५ वर्ष और जसवन्तसिंह की १२ वर्ष की थी। महाराव अमरसिंह को जब नील वस्त्र पहिना कर और नील रंग के घोड़े पर सवार कराकर राज्याधिकार च्युत करके देश निकाला दिया गया था तब बहुत से वीर राठौर उसके साथ ही निकल गये थे। उनमें इनका मामा भाऊ नरोड़ भी था। बाहर आकर उन्होंने बादशाह के लिए कई युद्ध विजय किये। उन्होंने दक्षिण और बुन्देलखण्ड के युद्धों में मराठों और बुन्देलों से मारके के युद्ध कर विजय प्राप्त की। फिर शाहजादा शुजा के साथ युद्ध करने काबुल भी गये। अमरसिंह का यश तथा उनका उग्र स्वभाव और असाधारण क्रोध सर्वत्र ही प्रसिद्ध हो गया। उनकी आँखें देखकर बड़े २ वीरों के कलेजे काँप जाते थे। उनके साथ चुने हुए और वीर भी बहुत थे। इन्हीं वीरों में एक वीरवर बल्लू जी चांपावत थे जो बड़े भारी योद्धा थे। तथा वीरवर गोकुलदास जी के आठ पुत्र हुए जो आगे चलकर महावीर प्रसिद्ध हुए, और आठों बड़े-बड़े युद्धों में काम आये। इन आठों वीरों का वर्णन इस प्रकार इतिहास में किया गया है—

अन्यान्य दरबारी उमराव को बारी २ से बादशाह की ड्योढ़ियों पर पहरा देना पड़ता था। बड़े २ राजा और सरदारों को अपनी अपनी बारी पर ड्योढ़ियों पर हाज़िर रहना पड़ता था। अमरसिंह को जब ड्योढ़ियों पर पहरा देने की आज्ञा हुई तो उन्होंने क्रोध पूर्वक इन्कार कर दिया। इन सब बातों से तथा सलाबत खाँ द्वारा कान भरे जाने से बादशाह शाहजहाँ बहुत अप्रसन्न हो गया और अमरसिंह पर पांच लाख रुपये का जुर्माना कर दिया।

दूसरे दिन जब अमरसिंह दरबार में हाज़िर हुए तो बख्शी सलाबत खाँ ने उन्हें जुर्माना दाखिल करने को भरे दरबार में कहा। बात से बात बढ़ गई और उन्होंने क्रोध में भरकर कटार सलाबत के पेट में भोंक दी। सलाबत खाँ वहीं मर कर ढेर हो गया। अमरसिंह ने बादशाह पर भी वार किया पर कटार खम्भे में जा टकराई और बादशाह तुरन्त उठ भाग खड़ा हुआ। अमरसिंह महल से निकल कर घोड़े पर चढ़ गये और वहाँ से आमखास के मैदान में घोड़े सहित कूद पड़े। घोड़ा तो गिर के मर गया पर वे स्वयं किसी तरह बच कर घर आ पहुँचे। वहीं से उनके साले अर्जुन गौड़ ने उन्हें धोखे से किले में मार डाला। बादशाह ने उनकी लाश को बुर्ज पर डलवा दिया और [illegible] को [illegible] करने तथा [illegible] का हुक्म दे दिया।

रानी ने यह सुना तो [illegible] से [illegible] का मुकाबिला किया। [illegible] ने [illegible] दिन में आकर महाराज की [illegible] को [illegible] लाने का [illegible] की और [illegible]

सेना ने नौमहला घेर लिया तथा युद्ध भी ठान लिया।

यह वृत्तान्त महाराज अमरसिंह के प्रधान भाऊ जी कम्पावत ने बल्लूजी को दिया, जो वहीं आगरे रहते थे। उन्होंने प्रथम तो सहायता देने से मना कर दिया परन्तु पीछे जी के कहने से मरने-मारने पर तुल गये और सेना से किले पर धावा बोल दिया तथा अमरसिंह की लाश को पराक्रम से उठा लाये और इस प्रकार अमरसिंह का ताने के रूप में कहा हुआ वाक्य सच्चा किया। यह युद्ध बुखारा फाटक पर हुआ और बल्लू जी बेखतर मारे भी गए। यह घटना विक्रम सम्वत् १७०१ की है। उसी दिन से यह फाटक शाही हुक्म से बन्द कर दिया गया तथा जिस बुर्ज से घोड़ा कुदाया था उसे 'अमर बुर्ज' अब भी कहा जाता है। कहते हैं कि बुखारा फाटक को जब-जब किसी ने खोलना चाहा, एक विषधर सर्प ने उसकी फन से निकल कर उसे डस लिया। चिरकाल तक लोग भय से उस फाटक के निकट नहीं गये। अन्त में सन् १८७८ में ए० पी० जे० कप्तान मिस्टर स्टील ने उस फाटक को खोला और वह सर्प वहाँ से निकलकर किसी तरफ को चला गया।

नागौर में अमरसिंह की छतरी बनी है। इसके पुत्र का नाम रायसिंह था जिसने औरङ्गजेब के राज्यकाल में अच्छी योग्यता का परिचय दिया था। इसी रायसिंह के पुत्र इन्द्रसिंह से जोधपुर के महाराज अजीतसिंह ने नागौर छीन लिया था।

उपरोक्त ऐतिहासिक कथानक ही हमारे इस नाटक की भित्ति

है। इस घटना को देश का बच्चा-बच्चा जानता है। मोटेरी से गेय काव्यों ने इसका खूब प्रचार किया है परन्तु हमें इस लिखने में बड़ा कष्ट हुआ क्योंकि अमरसिंह का इस प्रकार उत्तेजित होने का जो कारण इन पुस्तकों में दिया है वह वास्तव में निराधार है।

हमने शहबाज खाँ पठान की मैत्री और सहायता का जो वर्णन इस नाटक में किया है उसका वर्णन ऐतिहासिक नहीं है। बच्चू जी की साधारण राज समाजों की पुस्तक में काजी पुत्र को 'शाहनवाज' के नाम से पुकारा गया है। रामसिंह को नाटक में हमने अमरसिंह का भतीजा लिखा है। इतिहास में उसका नाम नहीं है। प्रचलित कथाओं के आधार पर ही हमने लगा दिया है। नाटक भी काल्पनिक है और राजा का प्रेम भी।

आशा है इस वीररसपूर्ण नाटक से पाठकों का मनोरंजन और शिक्षा-लाभ दोनों की प्राप्ति होगी।

—चतुरसेन

अङ्क एक

पहिला दृश्य

[स्थान पहाड़ी जंगल। दूर तक ऊँचे पर्वत और कँटीली झाड़। घोड़े पर सवार अमरसिंह और उसके सरदारों का प्रवेश।]

अमरसिंह— (पसीना पोंछते हुए) उफ, कितनी गरमी है। कहीं छाया नहीं। सूरज आग उगल रहा है। तपती लूओं के झोंके शरीर को झुलसाये डालते हैं। कंठ सूख गया। किसन, एक गिलास पानी दो।

[किसन सुराही में से पानी उँडेलता है]

एक सिपाही—(आगे बढ़कर) श्री महाराज! बहू जी की सुराही का पानी खत्म हो गया है, बहूरानी जल माँगती हैं।

किसनसिंह—अन्नदाता, सुराही में केवल यही आधा गिलास जल है।

अमरसिंह— (घबराकर) क्या आसपास कहीं जल का ठिकाना नहीं?

सिपाही— अन्नदाता, दस-बीस कोस में जल नहीं दीखता।

अमरसिंह— यह गिलास बहूरानी को दे।

[किसन जाता है]

अमरसिंह— (घोड़े पर खड़े होकर दूर तक चारों तरफ देखता है।

है। इस घटना को सब का बच्चा-बच्चा जानता है। मौलवी के इन नाटकों ने इसका खूब प्रचार किया है परन्तु हमें इसे लिखने में बड़ा कष्ट हुआ क्योंकि अमरसिंह का इस प्रकार उत्तेजित होने का जो कारण इन पुस्तकों में दिया है वह वास्तव में निराधार है।

हमने सलाबत खाँ पठान की सेवा और सहायता का जो वर्णन इस नाटक में किया है उसका वर्णन ऐतिहासिक नहीं है। बल्लू जी को साधारण सब समाचारों की पुस्तक में दासी पुत्र या 'मोसूशाह' के नाम से पुकारा गया है। रामसिंह को नाटक में हमने अमरसिंह का भतीजा लिखा है। इतिहास में उसका नाम नहीं है। प्रचलित कथानकों के आधार पर ही हमने लिखा दिया है। ताज भी काल्पनिक है और हाड़ा का प्रेम भी।

आशा है इस वीररसपूर्ण नाटक से पाठकों का मनोरंजन और शिक्षा दोनों ही की प्राप्ति होगी।

—चतुरसेन

अङ्क एक

पहिला दृश्य

[स्थान पहाड़ी जंगल। दूर तक नंगे पहाड़ और [illegible] घोड़े पर सवार अमरसिंह और उसके मुसाहबों का प्रवेश।]

अमरसिंह—(पसीना पोंछते हुए) उफ, कितनी गरमी है। कहीं छाया नहीं। सूरज आग उगल रहा है। गरम लूओं के झोंके शरीर को झुलसाये डालते हैं। कंठ सूख गया। किशन एक गिलास पानी ला।

[किशन सुराही में से पानी उँडेलता है]

एक सिपाही—(आगे बढ़कर) श्री महाराज! यह भी सुराही का पानी गरम हो गया है, बहूरानी जल माँगती हैं।

किशनसिंह—अन्नदाता सुराही में केवल यही आधा गिलास जल है।

अमरसिंह—(घबराकर) क्या आसपास कहीं जल का ठिकाना नहीं?

सिपाही—अन्नदाता आसपास कोस में जल नहीं मालूम।

अमरसिंह—यह गिलास बहूरानी को दो।

[illegible]

अमरसिंह—[illegible]

अंजन में से रहा—हाय मरा! पानी! हाय प्राण बचाओ। (एक बूंद पानी माँग समाकर) सुनो, यह किसकी आवाज है। (सब सुनते हैं—हाय! एक तिनका! अल्लाह के नाम पर कोई भाई या बाप एक बूँद पानी दे। एक बूँद पानी।)

अमरसिंह— (पुकार कर) किसन जरा इधर आ सिपाह बाहर मेरे साथ आ। (घोड़े को उधर बढ़ाता है।)

[एक आदमी के सामने जहाज़ सा बैठा पड़ा है]

अमरसिंह— (घोड़े के पास बैठकर स्नेह) अरे क्या मर गया? (छाती पर हाथ धर कर) नहीं जीता है। किसन इसके मुँह में पानी डाल। (किसन पानी डालता है)

शाहजहाँ— (होश पाकर) या खुदा पानी मिल गया। कलेजा ठंडा हो गया। आप कौन हो परवरदिगारआलम मेरा जान से बड़ा काम करने वाला फरिश्ता यहाँ कब?

अमरसिंह— तुम्हारी कुछ भी अनजान नहीं है। क्या तुम कुछ ज्यादा कमजोर हो? नहीं हो आया। (हाथ के सहारे से उठाता है)

शाहजहाँ— (खड़ा होकर) ए मेरे मददगार नाम! तुम यार जो कोई हो तुमने मेरी जान बचाई है। जब तक मेरा जीना रहेगा कभी नहीं भूल सकूँगा। (आदर और अमरसिंह को ध्यान से देखकर) हुज़ूर कहाँ राजपूत मालूम होते हैं।

अमरसिंह— (मुस्कराकर) मैं अमरसिंह राठौर हूँ। पर तुमने मुझे अभी दोस्त कहकर पुकारा था न?

शाहबाजखाँ— (संकोच से) महाराज के रुतबे का मुझे ख्याल न था। गुस्ताखी माफ फरमाएँ। (कदमों में बैठकर) मैं अदना सिपाही महाराज की दोस्ती का दम भरने की ताब नहीं रखता। मगर मैं ताउम्र हुजूर का जरखरीद गुलाम रहूँगा।

अमरसिंह— दोस्त जो बात सचाई से मुँह से निकल गई है, उसे वापस मत लो। आज से तुम अमरसिंह राठौर के दोस्त समझे गए (अपनी पगड़ी उतारकर उसके सिर पर रखता है और उसकी अपने सिर पर रखता है) याद रखना अब हम पगड़ी-बदल भाई हुए। आओ गले मिल लें। (गले मिलकर) हाँ, तुम्हारा नाम क्या है?

शाहबाजखाँ— (आँखों में आँसू भरकर) एक अदना सिपाही की जान बचाई आपने और यह इज्जत दी है। खुदा उसका बदला देने का दिन लाए। मेरा नाम शाहबाजखाँ है और मैं पठान हूँ।

अमरसिंह— बहुत ठीक तुम आगरे ही पर रहते हो न? अच्छा एक घोड़े पर चढ़ जाओ। मुझे आज ही आगरे पहुँचना जरूरी है। ओफ सूरज डूब रहा है। (धीरे धीरे प्रस्थान)

[पटाक्षेप]

जंगल से मैं आया—हाय मरा ! पानी ! हाय प्राण बचाओ । एक बूँद पानी (कान लगाकर) सुनो यह किसकी आवाज है । (सब सुनते हैं—हाय ! एक [illegible] कोई [illegible] एक बूँद पानी दे । एक बूँद पानी ।)

अमरसिंह— (पुकार कर) सिपाह [illegible] जरा [illegible] ले आय था । (पीछे को इशारा करता है ।)

[एक आदमी के सहारे [illegible] को लाता [illegible] है]

अमरसिंह— ([illegible]) अरे क्या मर गया ? (छाती पर हाथ रख कर) नहीं जीता है । सिपाह इसके मुँह में पानी डाल । (सिपाह पानी डालता है)

[illegible]— (होश आकर) आ [illegible] पानी मिल गया । कलेजा ठण्डा हो गया । [illegible]

[illegible] क्या [illegible] ?

अमरसिंह— [illegible] कुछ भी [illegible] नहीं है । क्या तुम कुछ [illegible] हो ? [illegible] हो जाओ । (हाथ से [illegible] से उठाता है)

[illegible]— ([illegible]) हे मेरे [illegible] ! तुम था। जो कोई हो तुमने मेरी जान बचाई है । [illegible]

[illegible] पसीना [illegible]

([illegible] और [illegible]) इधर कोई राजकुमार मालूम होता है ।

अमरसिंह— (मुस्कराकर) मैं अमरसिंह राठौर हूँ। पर तुमने मुझे अभी दोस्त कहकर पुकारा था न ?

शाहबाजखाँ— (संकोच से) महाराज के रुतबे का मुझे ख्याल न था। गुस्ताखी माफ फरमाएं। (कदमों में बैठकर) मैं अदना सिपाही महाराज की दोस्ती का दम भरने की ताब नहीं रखता। मगर मैं ताउम्र हुजूर का जरखरीद गुलाम रहूँगा।

अमरसिंह— दोस्त, जो बात सचाई से मुंह से निकल गई है उसे वापस मत लो। आज से तुम अमरसिंह राठौर के दोस्त समझे गए (अपनी पगड़ी उतारकर उसके सिर पर रखता है और उसकी अपने सिर पर रखता है) याद रखना, अब हम पगड़ी-बदल भाई हुए। आओ गले मिल लें। (गले मिलकर) हाँ, तुम्हारा नाम क्या है ?

शाहबाजखाँ— (आँखों में आँसू भरकर) एक अदने सिपाही की जान आपने बख्शी और यह इज्जत दी है। खुदा उसका बदला देने का दिन लाए। मेरा नाम शाहबाजखाँ है और मैं पठान हूँ।

अमरसिंह— बहुत ठीक तुम आगरे ही चल रहे हो न ? अच्छा एक घोड़े पर चढ़ जाओ। मुझे आज ही आगरे पहुँचना जरूरी है। ओफ, सूरज डूब रहा है। (धीरे धीरे प्रस्थान)

[पटाक्षेप]

दूसरा दृश्य

[स्थान—आगरे में अमरसिंह का महल। समय सन्ध्याकाल। अमरसिंह बाग़ के एक संगमरमर की चौकी पर बैठे किसी गम्भीर विचार में निमग्न हैं। सामने फव्वारा चल रहा है। दूर दूर पर पक्षी बोल रहे हैं। उनकी उन्मुक्त स्वर-लहरी और मधुर वाद्य-ध्वनि से कभी-कभी अमरसिंह का ध्यान टूटता है।]

अमरसिंह—(स्वगत) यह मिर्ज़ा भी जगत की कैसी मनोरंजी वस्तु है। [illegible] और शृंगार—बस यही इसका संसार है। [illegible] रहा है। किसी हुई कामना की पुकार आ रही है। परन्तु मन बस हुआ [illegible] है। [illegible]

[[illegible]]

अमरसिंह—आज प्रिय सन्ध्या कैसी सुन्दर लगती है। डूबते हुए सूर्य की सुनहरी किरणों से यह [illegible] जगमगा रहा है। [illegible] सुनहरी [illegible] की [illegible] है। [illegible]

रानी— स्वामिन्, विनय से कोई भी हृदय बूँदी के भग्न-जीर्ण दुर्ग के साधारण कँगूरों और उसके आसपास की शून्य वनस्थली के योग्य मनोरम नहीं। जिसका इतिहास मेरे बाप-दादों के वीरतापूर्ण उत्सर्ग से परिपूर्ण है, जहाँ की बीघा-बीघा धरती पर मेरे आत्मीयों के गर्म रक्त के अमर-चिन्ह हैं, वह दुर्ग, वह धरती मेरे बाप-दादों की अपनी है, यह आगरा मुगल बादशाह और उसके वंशधरों की वस्तु है। इसकी शोभा के पारखी तो वही हो सकते हैं।

अमरसिंह—प्रिये, इतनी अरसिक तो न बनो। देखो, यह फव्वारा कैसा मोती-सा जल बखेर रहा है, कैसा सुन्दर है?

रानी— इस अभागे फव्वारे का जल जितना ही उन्नत होने का प्रयास करता है, उतना ही इसका पतन होता है। यह भृकुटी में बल डालकर क्रुद्ध होकर ऊपर उठता है और पत्थर पर गिरकर बिखर जाता है। स्वामिन्, इस बन्धन-ग्रस्त अभागे जल की इस दुर्दशा को ही आप सौन्दर्य कहते हैं। इसकी विवशता पर आपको तनिक भी दया नहीं आती।

अमरसिंह—सच है प्रिये, बन्धन का सौन्दर्य ही क्या?

[चिन्ता करने लगते हैं]

रानी— महाराज, दासी की धृष्टता क्षमा के योग्य नहीं, परन्तु घर और बाहर की शोभा तो उनके स्वाधीन विचरण

दूसरा दृश्य

[स्थान—आगरे में अमरसिंह का महल। समय संध्याकाल। अमरसिंह अपने बगीचे में एक संगमरमर की पटिया पर बैठे किसी गम्भीर विचार में निमग्न हैं। सामने फव्वारा चल रहा है। कुछ दूर पर कोनमें गोरी गा रही है। उनकी उत्कृष्ट स्वर-लहरी और मधुर वाद्य-ध्वनि से कभी-कभी अमरसिंह का ध्यान टूटता है।]

अमरसिंह—(स्वगत) ये स्त्रियाँ भी जगत की कैसी अनोखी वस्तु हैं। केवल गायन और शृंगार—बस यही इनका संसार है। कैसी ठण्डी हवा बह रही है। खिली हुई कमलों की बहार भी कैसी है। परन्तु मन जैसे डूबा जाता है, छाती जैसे पत्थर के बोझ से दबी जाती है। लो यह महारानी भी आ रही है।

[महारानी का प्रवेश]

अमरसिंह—आओ प्रिय, देखो कैसी सुन्दर संध्या है। डूबते हुए सूर्य की सुनहरी किरणों में यह मुगल सम्राट का भव्य किला कैसा शोभायमान हो रहा है। यह देखो शाहजहाँ के महलों के सुनहरी बुर्जों पर अस्तगत सूर्य की धूप की कैसी बहार है। इस चमेली की सुगन्ध को तो देखो। पर तुम इतनी उदास क्यों हो प्रिय! क्या घर की याद आ रही है?

रानी— स्वामिन्, इसमें से कोई भी दृश्य मुझे तो भग्न-जीर्ण दुर्ग के साधारण कँगूरों और उसके आसपास की शून्य वनस्थली के योग्य मनोरम नहीं। जिनका इतिहास मेरे बाप-दादों के वीरतापूर्ण उत्सर्ग से परिपूर्ण है, जहाँ की चौवा चौवा धरती पर मेरे आत्मीयों के गर्म रक्त के अमर-चिन्ह हैं, वह दुर्ग वह धरती मेरे बाप-दादों की अपनी है, यह आगरा मुगल बादशाह और उसके वंशजों की वस्तु है, इसकी शोभा के पारखी तो नहीं हो सकते हैं।

अमरसिंह—प्रिये, इतनी अरसिक तो न बनो। देखो यह फव्वारा कैसा मोती-सा जल बखेर रहा है, कैसा सुन्दर है?

रानी— इस अभागे फव्वारे का जल जितना ही उन्नत होने का प्रयास करता है, उतना ही इसका पतन होता है। यह भृकुटी में बल डालकर क्रुद्ध होकर ऊपर उठता है और पत्थर पर गिरकर बिखर जाता है। स्वामिन्, इस बन्धन-ग्रस्त अभागे जल की इस दुर्दशा को ही आप सौन्दर्य कहते हैं। इसकी विवशता पर आपको तनिक भी दया नहीं आती।

अमरसिंह—हाय है प्रिये, बन्धन का सौन्दर्य ही क्या?

[चिन्ता करने लगते हैं]

रानी— महाराज, दासी की धृष्टता क्षमा के योग्य नहीं, परन्तु घर और बाहर की शोभा तो उनके स्वाधीन विचरण

में ही है।

अमरसिंह—महारानी ! परन्तु

रानी— परन्तु कुछ नहीं प्राणेश्वर जीवन और प्रतिष्ठा दोनों ही से स्वतन्त्रता प्यारी चीज है । कहो स्वामिन् क्या यह सत्य नहीं है ?

अमरसिंह—सत्य है प्यारी मैं इस स्वर्ण-शृङ्खला को विदीर्ण करूँगा।

[खड़ा हो जाता है]

रानी— (खड़ी होकर) और तभी महाराज इस रानी के यथार्थ पति होंगे।

अमरसिंह—महारानी तुम्हारी जैसी वीरांगना मुझ अधम दास के भाग्य में विधाता ने लिख दी है। (कुछ ठहर कर) परन्तु प्यारी कुछ चिन्ता नहीं मैं तुम्हारा यथार्थ पति बनने की चेष्टा करूँगा।

रानी— धन्य महाराज धन्य यही तो मेरे पतिदेव का वास्तविक रूप है। राठौर नर-नाहर के समान भाज कौन सोहे का धनी है। महाराज दासी की नसों में भी हाड़ा-वंश का गर्म रक्त है।

अमरसिंह—मैं राठौर हूँ और मेरा रक्त भी ठंडा नहीं हुआ है।

रानी— चलो प्यारे हम यहीं गेम वो-जोल कर चार मुट्ठी धन्न खाया लेंगे।

अमरसिंह—नहीं हाड़ी राजकुमारी! तुम्हारा स्वामी इतना नगण्य नहीं है। मैं पिता के राज्य में न जाने की प्रतिज्ञा कर आया हूँ और [illegible] बादशाह की नौकरी भी छोड़ देने का संकल्प कर लिया। अब अगर यह तलवार सलामत है और अमरसिंह के दम में दम है तो मैं नव राज्य की स्थापना करूँगा (तलवार नंगी करके रानी के सम्मुख करता है)।

रानी— (तलवार का सिर से लगाकर) प्यारे! राजपूतानी के हृदय का पानी भी इसी तलवार की धार के पानी के समान सीधा होता है। मेरे वीर स्वामी आप कभी भी इस दासी को अपनी सहगामिनी होने के अयोग्य न पायेंगे। मैं हाड़ा-वंश की कुमारी हूँ महाराज!

अमरसिंह—और मैं भी राठौर हूँ महारानी!

रानी— तब आओ प्यारे! हम दोनों मनुष्य हो अपना जीवन बितावें। पर देखो सांझ हो रही है। क्षमा प्यारे कभी मानना पड़ती है। जैसे नगर आत्मा का उप[illegible] हो।

अमरसिंह—(दोनों के कंधे पकड़कर) प्रिय इसी सुन्दर उजली रातों में [illegible] उमंग और प्रेम की प्रतिज्ञा की और साथ का [illegible] ही स्वप्न लिया। [illegible] पहाड़ियों की गरिमा सुन्दर का शान्तपूर्ण गम्भीर था। यह साथ [illegible] इसी की

प्रतिबिम्ब है।

रानी— प्यारे, मैं उस पूजनीया के चरण चिह्नों पर चल कर अपना जीवन धन्य करूँगी। वह सती धन्य है जिस के स्वामी आज भी उन्हें इस आदर से स्मरण करते हैं।

[तारा का प्रवेश]

तारा— पिता जी आइये आप भी माता जी! आइये। देखिये मेरी हरिणी ने कैसा अच्छा बच्चा दिया है। पिताजी मैं इसके लिए एक अलग छोटा-सा महल बनवाना चाहती हूँ।

अमरसिंह—बेटी हरिण तो स्वच्छन्द वन में विचरण किया करते हैं। वे क्या महलों में रहते हैं?

तारा— परन्तु मैं उसे महलों में ही रखूँगी। क्यों माता जी आपकी क्या सम्मति है?

रानी— अवश्य तू अपने पिता की उपयुक्त पुत्री भी तो है।

(मुस्कराती है)

अमरसिंह—(हँसकर) क्यों प्रिय अब भी यह व्यंगबाण-वर्षण लगा?

रानी— अपना थोड़ा भाव बनाये रखने के लिये जिससे बचपन का स्मरण बना रहे।

अमरसिंह—तुम बड़ी निष्ठुर हो महारानी!

रानी— इसमें आश्चर्य क्या ? मैं हाड़ा-वंश की राजकुमारी हूँ महाराज !

अमरसिंह—अच्छा हाड़ी-महारानी जरा चलकर तारा के मृग शावक को भी देख लें।

रानी— आप ही इस अत्यन्त आवश्यक कार्य का भार लें मैं महल में जाकर महाराज के भोजन का प्रबन्ध करूँ।

[रानी का प्रस्थान]

तारा— माता जी को मेरी हिरनी भाती ही नहीं। कहती हैं खोल दो—बन्धन मुक्त कर दो।

अमरसिंह—बेटी वह राजपूत की बेटी है। स्वतन्त्रता उनके प्राणों में रम रही है। वे बन्धन में बद्ध किसी प्राणी को भी नहीं देख सकती।

तारा— पर यदि मैं उसे प्यार करूँ तब भी बन्धन में बाँध सकती हूँ या नहीं ?

अमरसिंह—नहीं बेटी प्यार का बन्धन तो स्वयं ही इतना मजबूत है कि किसी अन्य बन्धन की आवश्यकता ही नहीं रहता।

तारा— तब आप भी मेरे हरिण-शावक को नहीं देखेंगे ?

अमरसिंह—अवश्य देखूँगा बेटी अच्छा तुम उसे यहीं ले आओ। देखूँ, हरिण-शावक कैसा है ?

तारा— (प्रसन्नता से) मैं अभी ले आती हूँ।

(तारा का प्रस्थान)

अमरसिंह—(स्वगत) ये दो नारी-हृदय हैं जिनकी लगभग समान अवस्था है परन्तु एक अबोध बालिका-संसार के सब तापों से उन्मुक्त दूसरी तेज और दर्प की मूर्ति राजपूती रक्त की जीवित प्रतिमा। मैंने स्वाधीन होने का निश्चय किया है पर तारा के विवाह का क्या होगा? यह बिना माता की पुत्री (आँखों में आँसू भरकर) उस पवित्रात्मा की एकमात्र धरोहर! अच्छा देखूँ स्वाधीनता का मूल्य क्या देना पड़ता है।

[सेवक का प्रवेश]

सेवक— महाराज बन्दी सलाबतखाँ सीमाओं के दर्शनार्थ ड्योढ़ियों पर उपस्थित हैं।

अमरसिंह—(खड़े होकर) उन्हें आदरपूर्वक ले आओ। (सेवक का प्रस्थान) यह सलाबतखाँ क्या चीज है समझ में नहीं आता। यह इतनी मित्रता बढ़ाता है परन्तु इस मित्रता में आनन्द और उत्साह नहीं पैदा होगा। यह इतना नम्र इतना सभ्य इतना शान्तिप्रिय है कि क्या कहूँ। परन्तु उसका साथ मेरा मन गवारा ही नहीं। क्या यह मेरा उतावलापन मात्र है?

[सलाबत खाँ का प्रवेश]

सलाबतखाँ—आदाब राजा साहब मुबारक। महारानी भी खुश आमद मुबारक।

:—(उत्तर और सलाबत को छाती से लगाकर) मेरे प्यारे

अमरसिंह

दोस्त आपके प्रेम और मेहमाननवाजी का मैं तहे मन
धन्यवाद हूँ। आइए बैठिए।

[दोनों बैठते हैं]

सलाबत— सब खैरियत भाई ?

अमरसिंह—मुझे आगरे आए आज छः दिन हो गए परन्तु
दरबार में अभी तक हाजिर न हो सका। मेरी तबि
यत ठीक नहीं थी।

सलाबत— यह महाराज के दुश्मनों को क्या हुआ ? यों क्यों
नहीं कहते कि मामी साहिबा ने हुक्म नहीं दिया।

अमरसिंह—(हँसकर) नहीं दोस्त यह बात नहीं।

सलाबत— (हँसकर) खैर जाने दीजिए। मैं तब जल्दी सबसे
पर आपको इत्तला देने आया था।

अमरसिंह—फरमाइए।

सलाबत— बादशाह सलामत आपसे इस बात का जवाब तलब
किया चाहते हैं कि आपने बीकानेर के महाराज
करणसिंह पर फौज क्यों भेजी है ?

अमरसिंह—इस बात में बादशाह सलामत को कोई गुनेर
नहीं।

सलाबत— बादशाह सलामत यह समझते हैं कि
राजा आपस में ? सा वे यह पसन्द नहीं
के आपस में । बादशाह
शिकायत ... सुना है।

अमरसिंह—क्या-क्या सुना है ?

सलावत— एक यह कि आपने करणसिंह के आठ-सौ आदमी कटवा डाले हैं ।

अमरसिंह—और ?

सलावत— और यह कि आपने और भी फौजें भेजी हैं ।

अमरसिंह—और भी कुछ सुना है ?

सलावत— जी हाँ यह झगड़ा बहुत ही मामूली बात पर था ।

अमरसिंह—यानी ?

सलावत— यानी एक मतीरे की बेल पर जिसे दोनों राजा अपनी-अपनी बतलाते हैं ।

अमरसिंह—बिल्कुल सच है । यह बेल नागौर की हद में उगी थी ।

सलावत— और फल बीकानेर की हद में आया था ।

अमरसिंह—जिसकी ज़मीन में बेल उगी थी वही उसका स्वामी है ।

सलावत खाँ—फल जिसकी ज़मीन में है, उसको उसे लेने का अधिकार है ।

अमरसिंह—(जोश से) उसका फ़ैसला यह तलवार करेगी ।

सलावत— नहीं महाराज ! जहाँपनाह ने सरहद पर अमीन भेजने का हुक्म दे दिया है । आप अपने सिपाही वापिस बुला लें ।

अमरसिंह—यह कदापि नहीं हो सकता ।

सलाबत— महाराज यह शाही हुक्म है।

अमरसिंह—ये मेरे निजू मामले हैं इसमें शाही दखल की बिल्कुल जरूरत नहीं।

सलाबत— मैंने अमीन भेज दिया है आप फौजें वापिस बुला लीजिये।

अमरसिंह—आप अपने अमीन को वापिस बुला लीजिये।

सलाबत—(क्रोध से) यह भी नहीं हो सकता। यह शाही हुक्म है।

अमरसिंह—(क्रोध से) यह भी नहीं हो सकता यह मेरी आत्मा का हुक्म है।

[तारा का हरिण का बच्चा लिये अचानक प्रवेश]

तारा— यही वह प्यारा बच्चा है पिताजी ..(सलाबत को देख कर झिझक जाती है।)

अमरसिंह—लाओ देखूं। ये तुम्हारे चचा बख्शी सलाबत खां हैं बेटी। इनसे सजाने की क्या जरूरत है। भाई साहिब यही तारा मेरी आँखों की पुतली है। देखिये इसके हरिण के बच्चे को आप भी देखिये।

सलाबत— (तारा के सब शिरमिल कन से बचपन हाथ) आओ देखूं कैसा प्यारा बच्चा है।

[कुमित नेत्रों से तारा को देखता है। तारा बच्चे को ले कर शर्मीली हुई चली जाती है।]

सलाबत— महाराज लड़की चली क्यों गई?

अमरसिंह—आप से लजाकर। बहु निरी बच्ची है अभी इसकी

समझ कहाँ ?

सलाबत— क्या महाराज ने उसकी शादी का कुछ इन्तज़ाम किया है ?

अमरसिंह—जी हाँ उसकी सगाई उदयपुर के कुमार राजसिंह से हो गई है।

सलाबत— राजसिंह से ? गुस्ताखी माफ हो महाराज यह रिश्ता तो ठीक नहीं हुआ।

अमरसिंह—(नाराजी के स्वर में) ठीक क्यों नहीं हुआ ? यह आप कैसे जान सके। आप तो कोई मेरे सगे नहीं।

सलाबत— महाराज नाराज न हों। मैं तो महाराज का खैरख्वाह हूँ। हमेशा वही राय दूँगा जिसमें आपको फायदा हो। उदयपुर का राणा सल्तनत-शाही का दुश्मन है। वहाँ रिश्ता करने से शाहंशाहे आलम का नाराज होना मुमकिन है जिससे आपको दरबारे शाही में जो रुतबा हासिल है उसमें खलल पड़ जायगा।

अमरसिंह—(क्रोध से) क्या बादशाह सलामत हमारी लड़कियों की शादी भी अपनी ही मर्जी से करेंगे ? हम लोगों को इतनी स्वतन्त्रता नहीं ?

सलाबत— नहीं महाराज मेरा मतलब कुछ और ही है।

अमरसिंह—वह भी पेश कीजिये।

सलाबतखाँ—अगर आप अपनी लड़की की शादी किसी शाही खानदान के शाहजादे या किसी खास उमरा व रईस

के साथ कर दें तो आपको सहज ही में पाँचहजारी मनसब मिल सकता है।

अमरसिंह—(गुस्से से लाल होकर) क्या कहा ? मैं अपनी लड़की की शादी मुसलमान शाहजादे या किसी उमरा से कर दूँ ?

सलाबत— महाराज शाहजादे मुसलमान कहाँ रहे क्योंकि उन की वालिदा आप ही जैसे राजपूतों की बेटी थीं। राजपूत मुसलमानों को बेटियाँ दे ही रहे हैं। आप कोई नया काम तो करेंगे नहीं।

अमरसिंह—(तलवार खींचकर) मैं तुम्हें दोस्त कह चुका हूँ। तुम बड़े नीच और कमीने हो। जाओ आँखों के सामने से दूर हो !!

सलाबतखाँ—(उभर कोप से) क्या आपको मालूम है आप यह अल्फाज किस से कह रहे हैं ?

अमरसिंह—एक दोगले आदमी से जो दोस्त के रूप में दुश्मन है जो भेंट और विश्वास का अनुचित लाभ उठाता है जिसे बात करने की तमीज नहीं।

सलाबत— महाराज अमरसिंह तुम्हारी इस बदजुबानी का मजा तुम्हें जल्द मिलेगा।

अमरसिंह—मन तो आता है कि दो टुकड़े कर दूँ। (तलवार उठाता है।)

[सलाबत का भयभीत होकर प्रस्थान]

अमरसिंह—आह यह दण्ड है या पराए गुलाम का मिलता है। यह पतित मेरे ही घर में मेरे साथ ऐसा अपमान जनक व्यवहार कर गया। मेरी प्यारी बेटी का तिरस्कार कर गया। इस कमीन आदमी का विश्वास कर के अन्तःपुर में बुलाना ही भूल था। अब सब से प्रथम तारा के विवाह का प्रश्न सोचना है। इसमें एक क्षण का भी विलम्ब होने से न जाने क्या हो ?

[सोचते हुए प्रस्थान]

तीसरा दृश्य

[स्थान—दिन का चौथा याम। मीना बाजार लगा हुआ है। इसमें एक बढ़ कर सुन्दरियां रंग-बिरंगी पोशाकें पहिने दुकानें सजाए बैठी हैं। कुछ भी कुछ बेगमें शाह-जादियें और तातारी बांदियां घूम रही हैं। सब दुकानों की फेरती जाती हैं बादशाह सलामत तख्त पर सवार आते हैं। तख्त को तातारी बांदियां उठाये हुए हैं। आगे आगे कई स्त्रियां हाथों में सोने के थाले और गुलदस्ते लिए हैं। बहुत से ख्वाजासरा साथ चल रहे हैं। आगे बांदियां गाती चल रही हैं।]

बादशाह—(खुश होकर) वाह क्या समा बंधा है ! (बांदियों गाने वालियों पर मुस्करा कर) हम उस [illegible] वाली की दुकान पर

जाना चाहते हैं।

[बादशाह की सवारी उधर को घूमती है]

नकीब— (चिल्ला कर) अल्ले इलाही बरामद कर्द मुजरा अदब से।

[सब हट जाते हैं]

इत्रवाली स्त्री—(नवयुवती बेटी से) बेटी सावधान हो जाओ। बादशाह सलामत इधर ही तशरीफ ला रहे हैं। जरा कपड़े सम्भाल लो और इस तरह बैठो कि हजरत सलामत की नजर तुम पर पड़ जाय। अगर खुदा के फजल से बादशाह की नजर तुम पर पड़ गई तो तुम्हारे वालिद जरूर दो हजारी मनसब पावेंगे।

नकीब— (पुकार कर) होशियार अदब कायदा निगहदार।

बादशाह—(पास पहुंचकर) ऐ खातून! तुम यहाँ क्या बेच रही हो?

स्त्री— (खड़ी होकर, कोनिश करके) पनाह आलम मेरे पास कुछ बढ़िया इत्र हैं जो कन्नौज से मंगाये गये हैं।

बादशाह— (हँस कर) और उसकी कीमत क्या है?

स्त्री— सरकार, पहले नमूना तो मुलाहिजा फरमाइए। (लड़की से) बेटी जहाँपनाह को इत्र दो।

[कामिनी लज्जा से सिकुड़ कर हाथ में इत्र देती है]

बादशाह— (हँसकर) खूब खूब हमने तुम्हारा तमाम इत्र खरीद लिया। कहो क्या कीमत। (गले से मोतियों की माला उतार कर कामिनी के ऊपर फेंक देते हैं। फिर कुछ ठहर कर मुस्करा

अमरसिंह—आह! यह दण्ड है जो पराए गुलाम को मिलता है। यह पतित मेरे ही घर में मेरे साथ ऐसा अपमान जनक व्यवहार कर गया। मेरी प्यारी बेटी का तिरस्कार कर गया। इस कमीने आदमी का विश्वास कर के अन्तःपुर में बुलाना ही भूल था। अब सब से प्रथम तारा के विवाह का प्रश्न सोचना है। इसमें एक क्षण का भी विलम्ब होने से न जाने क्या हो?

[सोचते हुए प्रस्थान]

तीसरा दृश्य

[स्थान—क़िले का चौक खास। मीना बाज़ार लगा हुआ है। प्रथम एक बड़ कर सुन्दरियाँ रंग बिरंगी पोशाकें पहिने दुकानें सजाए बैठी हैं। कुछ की कुछ बेगमें शाहजादियें और तातारी बांदियां घूम रही हैं। सब ठगोनी करती जाती हैं बादशाह सलामत तख्त पर सवार आते हैं। तख्त को तातारी बांदियां उठाये हुए हैं। सब गुलाम नंगे सिर हाथों में सोने के डण्डे और मोरछल लिये हैं। बाहर से ब्याहमता बाजा बज रहा है। साथ बांदियां गाती जा रही हैं।]

बादशाह—(खुश होकर) वाह क्या समा बँधा है! (बांदियों गाने वालियां पर मुस्कराकर) हम उस दस्तकारी की दुकान पर

जाना चाहते हैं ।

[बादशाह की सवारी उधर को घूमती है]

नकीब— (सिजदा कर) अल्ले इलाही बरामद शवद मुजरा अदब से ।

[सब हट जाते हैं]

इत्रवाली स्त्री—(नवयुवती बेटी से) बेटी सावधान हो जाओ । बादशाह सलामत इधर ही तशरीफ ला रहे हैं । जरा कपड़े सम्भाल लो और इस तरह बैठो कि हजरत सलामत की नजर तुम पर पड़ जाय । अगर खुदा के फजल से बादशाह की नजर तुम पर पड़ गई तो तुम्हारे वालिद जरूर दो हजारी मनसब पावेंगे ।

नकीब— (पुकार कर) होशियार, अदब कायदा निगहदार ।

बादशाह—(पास ठहरकर) ए आदमी ! तुम यहाँ क्या बेच रही हो ?

स्त्री— (खड़ी होकर, कोर्निश करके) पनाह आलम मेरे पास कुछ बढ़िया इत्र हैं जो कन्नौज से मँगाये गये हैं ।

बादशाह— (हँस कर) और उनकी कीमत क्या है ?

स्त्री— सरकार, पहले नमूना तो मुलाहिजा फरमाइए । (लड़की से) बेटी जहाँपनाह को इत्र दो ।

[बालिका अदब से सिकुड़ कर हाथ से इत्र देती है]

बादशाह — (हँसकर) बहुत खूब हमने तुम्हारा तमाम इत्र खरीद लिया । यह लो कीमत । (गले से मोतियों की माला उतार कर बालिका के ऊपर फेंक देते हैं । फिर कुछ हँसकर कुछ

से) और भी कुछ तुम्हारे पास कहने को है ?

बाँदी— (सलाम करके) हज़रत सलामत ने कनीज पर बहुत रहमत फरमाई ।

बादशाह—हम तुम से बहुत खुश हैं । (गोले को खोल करके हाथ बढ़ाते हैं ।)

रहमत ख्वाजासरा—(धीरे से पास आकर) खुदावन्द उस जौहरी की दुकान का भी मुलाहिज़ा कर लिया जाय ।

बादशाह—(कनीजों में देखकर) बेहतर ! यह तो कोई राजपूतनी नज़र आती है ।

ख्वाजासरा—हज़रत यह अमरसिंह की धर्मतारा है ।

[बादशाह उधर तख्त से जाने का इरादा करता है ।]

एक तातारी बाँदी—(सामने आकर) शाहंशाह आलम यह फूल वाली एक गुलदस्ता हुज़ूर को नज़र किया चाहती है ।

बादशाह—(धीरे से) यह कौन है ?

बाँदी— (धीरे से) बेगम सलीमुद्दीन खाँ ।

बादशाह—वाह ! (तख्त से उतर जाने का इरादा करता है । पहुँच कर) वाह ! खातून गुलदस्ता खूब बना है ।

बेगम— यह जहाँपनाह की पसन्द पर मौकूफ है ।

[एक ख्वाजा बनाकर सलाम करती है ।]

बादशाह—(गौर से देखकर) वाह कैसी आली गुलाब और खूबसूरत शक्ल है। इसका क्या कीमती बना होगा यार।

सलाम— हुजूर कीमत तो इसकी बहुत है।

बादशाह—खैर सिपहसालार तुम यह अंगूठी लो और इसी पर सब्र करो। (हीरे की अंगूठी देता है)

सलाम— (झुककर) वाह, क्या अजीब चीज इनायत की।

बादशाह—(हँसकर) पहिनकर तो देखो मुमकिन है कि यह भी बड़ी हो।

सलाम— (मुस्कराकर) शहंशाह से मसखरी करने की जुर्रत कहाँ कर सकती मगर

[बादशाह का ध्यान तारा पर पड़ता है]

तारा— जहाँपनाह को आदाबअर्ज करती हूँ।

बादशाह—(मुड़कर) आह तुम हो तारा क्या देख रही हो?

तारा— हुजूर कुछ नहीं जवाहिरात हैं। ये जहाँपनाह के काम के नहीं।

बादशाह—ऐसा तो—जवाहिरात क्या कहा काम के नहीं। मुझे उनकी बड़ी जरूरत है। तुम्हारे जवाहिरात जरूर देखने होंगे।

तारा— सब हुजूर के सामने रखती हूँ (रखती है)

बादशाह—(देखकर) ठीक ये हमने ले लिये। (चोबदार से) इस लो, अर्जियों का महाजनी चौगुनी रकम का दिला दो।

[चले जाते हैं]

चौथा दृश्य

[स्थान—आगरे का दरबार आम। बादशाह शाहजहाँ तख्ते-ताऊस पर बैठे हैं। समय प्रातःकाल ८ बजे। उनके इर्द-गिर्द झुके हुए दरबारी सरदार खड़े हैं। आगे-पीछे और नकीब अदब से यथास्थान खड़े हैं। बादशाह के ऊपर सुनहरी जरदोजी का चदोवा टँगा है। सामने सलावत खाँ अपना नीचा सिर किये खड़े हैं।]

बादशाह— सलावत खाँ क्या यह सच है कि अमरसिंह का इरादा बगावत करने का है।

सलावत खाँ—जहाँपनाह हुजूर की खिदमत में कुछ अर्ज नहीं कर सकता मगर उसने शाही ड्योढ़ियों पर नौकरी बजाने से साफ इन्कार कर दिया है। और जहाँपनाह ने बीकानेर की सरहद के झगड़े को मिटाने के लिये जो अमीन मुकर्रर किया था उसे भी वह मानने से इन्कार करता है।

बादशाह— उसकी इतनी जुरअत! शाही हुक्म और नौकरी से इन्कार! इसका बाइस क्या है?

सलावत— पनाह आलम अमरसिंह के सिवा और क्या बाइस हो

सकता है।

बादशाह— तुम्हारा क्या ख्याल है आसफ खाँ ?

आसफ खाँ—हुजूर यह मगरूरी ही नहीं, नमकहरामी भी है।

बादशाह— हम इसकी तम्बीह किया चाहते हैं। तुम खुद एक बार शाही हुक्म की तामील कराने की कोशिश करो। उससे कहो—जब वह अपने बाप की रियासत से निकाला हुआ आवारागर्द की सूरत में आगरे आया था, तब शाही इनायत ने उसे सरफराज किया था। उसे मनसब मरातिब जागीर और नौ-महल का आलीशान महल इनायत किया गया था। उसे हमने शाही फौज का एक जिम्मेदार सिपहसालार बनाया था। उन सब का यह बदला। आखिर मैं सिर्फ उसकी बहादुरी का कायल हूँ। उससे कहो कि ड्योढ़ियों पर हस्ब मामूल नौकरी बजा लाए।

सलाबत खाँ—जो इर्शाद। मगर जहाँपनाह, अगर रामसिंह को हुक्म दिया जाय तो बेहतर होगा। इस मामले में मुमकिन है बात बिगड़ जाय। रामसिंह ड्योढ़ियों पर हाजिर है। हुक्म हो तो हाजिर किया जाय। वह उसे समझा सकता।

बादशाह— बेहतर, रामसिंह को बुलाओ।

[सलाबत खाँ रामसिंह को बुलाने के लिये प्रस्थान]

बादशाह— (गुस्से से) अगर सल्तनत के सरदार इस कदर मुतक

करेंगे तो सल्तनत मुग़लिया का खात्मा समझिये ।

[रामसिंह का प्रवेश]

रामसिंह—(कोर्निश करके) जहाँपनाह का क्या हुक्म है ?

बादशाह—(गुस्से से) तुम्हारे चचा अमरसिंह की बाबत जो कु
हम सुनते हैं—क्या यह सच है ?

रामसिंह—जहाँपनाह ने क्या सुना है ?

बादशाह—यह कि वह सरकशी पर आमादा है ।

रामसिंह—जहाँपनाह यह बात बिल्कुल झूठ है । आपके अहसा
और कृपाओं को चाचाजी भूल नहीं सकते । ज
हुज़ूर चाहेंगे वे आपके लिये प्राण दंगे ।

बादशाह—मगर वह ड्योढ़ियों पर नौकरी बजाने हाजिर क
नहीं हुआ ?

रामसिंह—जहाँपनाह यह दूसरी बात है । वास्तव में चाचा
अब शाही नौकर नहीं रहना चाहते । स्वाधीन
उनके स्वभाव को प्रिय है ।

बादशाह—क्या यह सरकशी नहीं ?

रामसिंह—नहीं जहाँपनाह ।

बादशाह—शाही हुक्म उदूली नहीं ?

रामसिंह—नहीं वे पहले ही जहाँपनाह की खिदमत में अर्ज़
कर चुके हैं कि अब शाही नौकरी नहीं करेंगे ।

बादशाह—(गुस्से में लाल होकर) यह नाफ़रमानी है । हम गु

हुक्म देते हैं कि उसे ड्योढ़ियों पर नौकरी देने हाजिर करो।

रामसिंह— यह असम्भव है जहाँपनाह!

बादशाह— (गरजती आवाज से) उसे हाजिर करो। उसे आना होगा।

रामसिंह— (धीरे स्वर में) वे नहीं आयेंगे जहाँपनाह!

बादशाह— जब तक वह ड्योढ़ियों पर हाजिर न हो, एक लाख रुपये रोज के हिसाब से जुर्माना दे।

रामसिंह— जुर्माना वसूल करने कौन जायेगा जहाँपनाह।

सलाबत— अगर जहाँपनाह हुक्म दें तो गुलाम यह शाही खिदमत बजा लायेगा।

रामसिंह— ऐसी साहेब मालूम होता है आपका सिर फालतू है। कागजों का कुछ न करना ही अच्छा है। वरना आगरे की ईंटें हिल जायेंगी। हुक्म हो तो मदद जाय।

बादशाह— ठहरो! हम तुम्हीं को हुक्म देते हैं कि कल दरबार आम में अमरसिंह का सब जुर्माना हाजिर करो। समझे?

रामसिंह— (होठ चबाकर) समझ गया जहाँपनाह!

बादशाह— इसके बदले शाही इनाम तुम्हें मिलेगा।

रामसिंह— (हँसकर) इनाम की अपेक्षा तो अमर का बलिदान प्यारा है। जब हुजूर का हुक्म है तो कागजों को मैं दरबार में हाजिर करूँगा। जहाँपनाह अपना जुर्माना वसूल कर सकते हैं।

बादशाह— याद रखो अगर शाही हुक्म की तामील न हुई तो नौमहल को खाक में मिला दिया जायगा। मुगल बादशाह का एक बाग निज़ाम बदल सकती है तो दूसरी फौज फौलाद की राख बना सकती है। समझ गये? जाओ।

रामसिंह— समझ गया जहाँपनाह।

[प्रस्थान]

बादशाह— यह साँप का सँपोला है। अभी से इसमें यह तेजी है सलाबतखाँ!

सलाबत— पनाहे आलम!

बादशाह— एक मजबूत दस्ता नौमहले को घेरने का रवाना कर दो।

सलाबत— जो इर्शाद बन्दा नवाज़।

[परदा गिरता है]

पाँचवाँ दृश्य

(स्थान—नौमहला। राजमहल का भीतरी भाग। ग्रीष्म की उज्ज्वल चाँदनी रात। चौकी पर मसनद बिछी है। उस पर मसनद के सहारे अमरसिंह बैठे हैं। बायें ओर हाड़ी रानी है। आमने-सामने [illegible] लगी हैं। [illegible] की चौकी पर रखा है। दो [illegible] लिये खड़ी हैं। [illegible] और [illegible])

राग खम्भाच

सखियन रही जी सुहाग हो माही जी थारो ।
हाहा करत रिसाय हम सरबस कर सब कोय ।
गज गजराजनि म परै हँसी सखी की होय ॥
हो साजन जी ॥
तुमहिं कन्त दुराव हो क्यों लखि तन सुकुमार ।
सब दरस आतुर भई भानुर पट निरवार ॥
हो माही जी ॥

[चन्द्रज्योति सखियों का प्रवेश सुरा करके कुछ हटकर बावली के किनारे बैठ जाती है । सखियाँ भी गाया करती है । कोई गाती है । चारितार गाता है ।]

भरना ए सुघड़ कमाल दारुहो भागी गे ।
पीवण लाग लागी ग ॥१॥

चन्द्रज्योति—(ऊपर से कम शरमाती हुई उठकर) म नन्दना दारु मारोगिण ।

[चन्द्र के ध्यान म मग्न रही है]

अमरसिंह—(हँसकर) चन्द्रज्योति इस रूपसी यवन यौवना में यह भाव मन्दिरा कभी सुभावनी प्रकाश होता है ।

[सराब पीकर प्याला सखियों म भरकर मौन रहे है]

चन्द्रज्योति—(मन का हार तारकर उठा माली मन-मन्दिर पर बार बार कर गलबहियाँ को सुखनी हुई) चन्द्रमाओं की जय हो ।(हँसकर)महाराज यह मदिरा भी इस रस

रात्रि का प्रसम रस है। पीजिये महाराज !

[दूसरा प्याला देती है]

[गानेवालियाँ और जोश में गाती हैं]

दारू पीवो रंग चढ़ा राता राखो नैन ।

वैरी थारा जल मरे सुख पावला सैन ॥दारूड़ा॥२॥

रानी— (जोश में आकर) वाह क्या बात है ! यह लो ! (चन्द्रहा उतार कर राजजी पर वार कर गायिकाओं पर फेंकती है

चन्द्रज्योति–(एक प्याला आगे बढ़ाकर) आरोगिए दरबार (अमरसि हँसते-हँसते प्याला पी जाते हैं। गायिकायें गाती हैं)

सोरठ को दोहा भलो कपड़ा भलो सपेत ।

नारी तो निवली भली घोड़ो भलो कुमेत ॥दारू०३॥

रानी— (मुस्कराकर) महाराज अब अधिक मात्रा न बढ़ाइए

अमरसिंह—(मद में) क्या चिन्ता है प्रिये आज सुगद मिल की रात है।

[गानेवालियाँ रानी का संकेत पाकर]

आम फले परवार सां मटू फल पल गोय ।

निगरों रस मालम पिये ताज पठाणी होय ॥दारू॥

रानी— (प्रसन्न होकर) वाह-वाह ! लाख रुपये की बात कही है (माला हाथ का कंगन उतार कर दे डालती है)

[नवाब का प्रवेश]

नवाब— (हाथ जोड़ कर) अन्नदाता की जय हो। महाराज कुँवर रामसिंह ड्योढ़ी पर हाजिर हैं। मुजरा क

सलाम अर्ज़ करते हैं।

अमरसिंह—इस समय रामसिंह क्यों आया ? (कुछ नशे की झोंक में) आने दो यहीं आने दो।

[सलाम का प्रस्थान]

रानी— (संकेत से दासियों को जाने का संकेत करके) महाराज इस समय में रामसिंह के आने का कुछ गूढ़ उद्देश्य हो सकता है आप सावधान हूजिये।

[सारी दासियों का प्रस्थान]

अमरसिंह—(नशे की झोंक में) मैं सदा ही सावधान हूँ। चन्द्रज्योति या एक प्याला और दे। (चन्द्रज्योति प्याला देती है और रानी का संकेत समझ चली जाती है)

[रामसिंह का प्रवेश]

रामसिंह— जुहार काकाजी जुहार काकाजी।

अमरसिंह—पुत्र इस समय आने का क्या कारण है ? कुशल तो है ? (नशे की झोंक में) अच्छा पहले एक प्याला

रामसिंह— (हाथ जोड़कर) काकाजी सावधान हूजिये मैं बादशाह का सन्देसा लाया हूँ।

अमरसिंह—(नशे में) क्या बादशाह सलामत यहाँ आ रहे हैं ?

रामसिंह— नहीं महाराज उन्होंने आपकी मुख्य ड्योढ़ियों पर चौकसी बढ़ाने का हुक्म दिया है।

अमरसिंह—(गुस्से में आग होकर) क्या कहा ? ड्योढ़ियों पर चौकी बिठाने का ?

रामसिंह— हाँ महाराज और यदि इसमें ढील हुई तो जुर्माना सात लाख रुपया—एक लाख रोज के हिसाब से ।

अमरसिंह—(तलवार की मूठ पर हाथ धर के) और यह जुर्माना वसूल कौन करेगा ?

रामसिंह— काकाजी यदि आप अभी ड्योढ़ियों पर जाकर नौबतें नहीं बजायेंगे तो कल आपको मेरे साथ दरबार खास में हाजिर होकर जुर्माना चुकाना होगा ।

अमरसिंह—क्या तेरे साथ मैं जुर्माना अदा करने चलूँगा ?

रामसिंह— जाना पड़ेगा काकाजी मैं बादशाह को वचन दे आया हूँ । तैयार रहिए हम लोग वह जुर्माना चुकायेंगे जिसकी याद पीढ़ियों तक रहेगी ।

अमरसिंह—(क्रोध से फुफकारता हुआ) अरे कायर तू केवल वचन ही दे आया है । हाथी का पुत्र होकर भी तूने यह अपमान सह लिया ? तू राठौरवंश का कुलाङ्गार हुआ । मेरा अपमान सुनकर तू जीवित सामने चला आया !!

रामसिंह— काकाजी ऐसी बात नहीं है

अमरसिंह—अरे, जिस समय जुर्माने का शब्द कानों से सुना था मुझे उसी समय उस मुख की जीभ काट लेनी थी । उसकी गर्दन भुट्टे-सी क्यों न उड़ा दी ?

रामसिंह— (आँखों में आँसू भरकर) काकाजी मुझे आपको सूचना देना आवश्यक था । आपके इस सेवक को

प्राणों का तनिक भी मोह नहीं। परन्तु मैं चूक करता तो लोग यही कहते कि कायरपन किया।

अमरसिंह—अच्छी बात है, कल मैं भरपूर जुर्माना अदा करूँगा। (कटार कमर से खींचकर) इसी की नोक पर रखकर। तुम चिन्ता नहीं, कल मेरे साथ निर्भय दरबार चलो।

रानी— स्वामी यह शत्रुपुरी है। सब बातों की सावधानी की आवश्यकता है। अपने साथ योद्धा बहुत कम हैं। सोच विचार कर काम कीजिये।

अमरसिंह—प्रिय सोच-विचार कायर किया करते हैं। अभी-अभी तुम हाड़ापन की वीरता का बखान कर रही थी अब ऐसी सम्मति देती हो। मैं अमरसिंह ही क्या जो मीर और शाह का पाठ न पढ़ा दूँ ?

रामसिंह— काकाजी मुझे अवश्य आज्ञा दीजिये मैं अकेला ही जाकर सब मामला सुलझा आता हूँ। मैं सिंह का जाया हूँ।

अमरसिंह—न! तुम अब बालक नहीं, अमरसिंह स्वयं ही सुलझायेगा। जो होना होगा वह होगा। तू अपनी काकी के पास रहकर मोहल्ले की रक्षा करना। मैं दरबार में वह रंग मचाऊँगा जो कभी दिल्ली में न देखा-सुना हो।

रानी— महाराज दासी की विनय ध्यान से सुनिये। युद्ध में भी विवेक दरकार है। स्वामिन् भूल तो तभी हुई जब शाही नौकरी स्वीकार की। अब मेरी सुनिये महाराज मेरा हार लीजिये और शाही जुर्माना चुका कर यहाँ की गुलामी का अन्त कीजिए।

अमरसिंह—तुम्हारा हार लेकर जुर्माना अदा कर दूँ। वाह महारानी अमरसिंह के जीवन को धन्य होने की अच्छी युक्ति बताई। क्यों मैं धन से ही इज्जत बेचकर प्राण बचाऊँ। अरी मूर्खा ! सौ करोड़ का खजाना सदैव मेरी इस तलवार की धार पर धरा रहता है। यह मेरे वंश की इज्जत का प्रश्न है। राठौर सदैव रण ही से समझौता करते हैं। पृथ्वी पर राठौर की अप्रतिष्ठा करने वाला जीवित नहीं रह सकता। जीवन तक पानी का बबूला है। रहा-रहा न रहा न रहा।

रानी— (आँखों में आँसू भरकर) स्वामिन् दासी का अपराध क्षमा हो। मेरा कहना यही है कि प्यार, बैर और प्रीति समान ही से करना चाहिये। मैं ऐसी अधम नहीं कि प्राण जैसे पति की प्रतिष्ठा में बट्टा लगाऊँ। पर स्वामी ऐसे बहुमूल्य प्राणों को अमानवपाशों से नष्ट करना भी बुद्धिमानी नहीं।

अमरसिंह—समझ गया महारानी, शहजादों की वीरता समझ गया। पर राठौर-वंश की यह रीति नहीं। तुम निर्भय

अमरसिंह — रहा रानी, मैं अपनी अप्रतिष्ठा का बदला लेकर यदि जीवित रहा तो इसी जन्म में गुलामी से मुक्त रहूँगा— नहीं तो वीरों की भाँति शरीर त्याग आपनी का कलंक मिटाऊँगा। [नदी म प्रस्थान]

छठा दृश्य

[स्थान—आगरे का शाही बगाल शाह का महल। समय—सन्ध्या-काल शाह मुसाहिबों सहित बैठे हैं। शराब का दौर चल रहा है। नर्तकियाँ नृत्य कर रही हैं। कवि और शायर बैठे हैं। दो दासियाँ पंखा झल रही हैं।]

[गायिका गाती है]

राग—छायानट

ये पंखियाँ प्यारे कुसुम बनें।
मद मल्हार साज सजेगी मुर भुर झूम झूमि [illegible] बनें॥
मगधर प्यार होऊ न प्यारे हा हा नामा भांति बनें॥
॥ य० ॥

गगन पपिहा गरज मर नाम पपम बन मीर!
रिय विन मय री [illegible] रुप नार-नयन मे टीर॥
॥ ये० ॥

गाये बैठी मटु पर झोकत खोल किवार।
मनो मदन गढ़ से चली ह्वै प्यारी तरवार॥
॥से०॥१॥

दारा— (शराब का एक प्याला पीकर) वाह बहुत अच्छा गाया। (एक मुसाहिब से) हिन्दी के राग कानों को कितना सुहाते हैं।

मुसाहिब— (हाथ जोड़कर) बजा इर्शाद। हिन्दी जुबान के क्या कहने हैं।

दूसरा मुसाहिब— मगर हुजूर यह अच्छी मालूम देती है तो किसी नाजनीन के मुँह से ही।

दारा— (हँसकर) नहीं यह बात नहीं। ये कविराज बैठे हैं। (कवि से) कविराजजी आप जरा इन साहब को एकाध ऐसा कवित्त सुनाइए कि ये कायल हो जाए।

कवि— (कौनिश करके) सुनिये शाहजादा—

रजना करमे कर म आ कहा कर मजा रखा मब मों मजमी।
मजनीर पुमान करा तन की तनको मरी रग मभे करनी॥
करनी भर म म करा पिय को पिय का मयरगमुन शोव घनी।
बचना नहीं जाग मब मजमा मजमा कर पी पग मू रजनी॥२॥

एक राजा साहब— वाह कविराज खूब कहा! हिन्दी का क्या सिंगार किया है। कैसा कारीगरी की दास्तान है। एकाध कवित्त वीररस का तो सुनाइये।

अमरसिंह (हाथ जोड़कर) जो आज्ञा महाराज सुनिए—

कवि— चला नृप भीम पै करासी नृप भीम चमू
नक्कमुखी तोपन के मक्क घररगाट हो
मार मोर घोरन का मोर न सुनाव दीर
घोरन की घोरन के घोर घररगाट हो।
मोर हम गीरन के मीर गरगाते बर
मीरन य पुष्पन के बाज घरगाते हों।
हर हरगाट घर पूज घरगाट टाप
घोर मरगाट मीम गम बर राट हो ॥"॥

× × × ×

दारा— वाह कवि खूब कहा। अच्छा अब नीति का भी तो
कविता सुनाइए। अच्छे पुरुष के लक्षण क्या हैं—

कवि— सुनिये शाहजादा—
रन सो निपट चूक, आगन सजीला वीर
उर को गम्भीर होय मीत मता सुर का।
मीठ को पगार पुनि पाप का मदिग हाय
दासन को मोषो दर्शन्माम मूर गर का।
मन का उदार श्रीमा हाय का अपमा टर
बाद ही का बाता है महेगा सुर दुर को।
गपिम रिमायहू म लेमा जा भेयारो तब
यान कहु याहू गिगार है पुरुष का ॥८॥
[सब वाह-वाह करते हैं]

दारा— (खुश होकर) वाह-वाह क्या खूब ! (शराब का प्यासा पीता है)

कवि— (फिर मुजरा करके)

छप्पय

यात यात में नरक करें निज मुख प्रभुताई।
जन जन तें मित्रता खुशल बाँध मनुहाई॥
सब कामन तें अरुचि न्याय आवे न महापद्।
ग्रामनि विपुल प्रसादु करें कुनाद बैन खद्॥
यों राजनीति चाणक्य कह जग प्रसिद्धि शिक्षा परम।
गनवे योग नाहिं नृपनिविम ये पद सेवक प्रथम॥४॥

एक मुसाहिब—क्या मुनासिब बात कही।

एक राजा साहब—वाह ! क्या कहना है।

दारा— दोस्तो आज का जल्सा बस यहीं खत्म किया जाय। उम्मीद है आप लोगों की खूब तबियत खुश हुई?

मुसाहिब— हुजूर शाहजादे की इनायत से वह-वह चीजें सुनने को मिलीं जो बायाद हैं।

[मुजरा करके जाते हैं]

दारा— (अकेले में अर्जुन और की रोक कर) राय अर्जुन मुझे आपसे तखलिये में कुछ कहना है।

अर्जुन— (सलाम करके) जैसी शाहजादा की आज्ञा ! (बैठ जाता है)

दारा— (सब के चले जाने पर) कहिये आपका उस मामले में

क्या किया ?

अर्जुन— शाहजादा साहेब मैंने महाराणा से चर्चा की थी वह आग-बबूला हो गई।

दारा— (क्रोध से) इसके क्या मान ?

अर्जुन— खुदावन्द मैं अर्ज नहीं कर सकता।

दारा— (गुस्से से) मैं हुक्म देता हूँ जो गुस्ताखी हुई हो साफ-साफ बयान करो।

अर्जुन— (हाथ जोड़कर) बन्दानवाज दास ने रानी को खूब ऊँच नीच समझाया। मगर उन्होंने एक ही जवाब दिया कि अनहोनी नहीं हो सकती।

दारा— अनहोनी क्या ? क्या हिन्दू सरदार की बेटी—तमाम हिन्दुस्तान के शाहंशाह के वली-अहद को ब्याही जाय और हिन्दुस्तान की मलिका कहलाय ? क्या यह न ऐसा नहीं हुआ ?

अर्जुन— शाहजादा, गुस्ताखी माफ हो अमरसिंह के कान में भनक जरा भी भनक पड़ी कि खैर नहीं।

दारा— परवाह नहीं मैं उस मच्छर की भाँति पीस डालूँगा।

[दरबान का प्रवेश]

दरबान— जहांपनाह सलामत ! बख्शी सलाबतखाँ ड्योढ़ियों पर हाजिर हैं।

दारा— हाँ मैंने उन्हें बुलाया है हाजिर करो।

[दरबान का प्रस्थान सलाबतखाँ आते हैं]

महाबतखाँ—बन्दगी शाहज़ादा।

दारा— बन्दगी खाँजी, कहिए, क्या ख़बर लाए हैं?

महाबतखाँ—ख़बर अच्छी नहीं।

दारा— क्या उसने इन्कार कर दिया?

महाबतखाँ—इन्कार ही नहीं उसने मेरे सिर का मुण्डा-सा उड़ाने को तलवार खींच ली।

दारा— अच्छा देखूँगा उस मग़रूर को। मैं परवाना देता हूँ उस पर बादशाह के दस्तख़त कराकर आज ही सरहद पर अमीन के पास भेज दो और उसे समझा दो कि हमारी हिदायतों का ख़्याल रखा जाय।

महाबतखाँ—जो हुक्म मगर अमरसिंह अमीन के फ़ैसले को नामंज़ूर करता है। वह कहता है कि मेरे काम में शाही दख़ल न होना चाहिये।

दारा— देखा जायगा। अभी अमीन के पास फ़र्मान रवाना कर दो और बादशाह सलामत के हुज़ूर में अर्ज़ करो कि अमरसिंह ने बग़ावत पर कमर बाँधी है।

महाबतखाँ—बहुत ख़ूब।

[महाबतखाँ का प्रस्थान]

दारा— (अर्जुन से) आप ख़बरदार रहिए राव साहब! आप मौक़ा पाते ही अमरसिंह को, रानी को या तारा को समझाइए जाय।

[अर्जुन का प्रस्थान]

तारा— (स्वगत) मैंने सिर्फ उसकी एक झलक ही देखी है। क्या ही पाकीजा सूरत है। क्या आँखें हैं। आह! अगर उसे न पा सका तो आगरे का तख्त पाने ही से क्या? (टहलता हुआ) खैर देखा जायगा।

सातवाँ दृश्य

[स्थान—नौगढ़ का। अमरसिंह चक्कर घूम रहे हैं। भू में चढ़ी हुई आँखें साफ समय—प्रातःकाल]

अमरसिंह—(स्वगत) दासता के बन्धन में बँधने का अपराध जो कोई राजपूत करेगा उसे कठोर प्रायश्चित्त करना ही पड़ेगा। यही प्रायश्चित्त आज मुझे करना है। सिंह बन्धनों में नहीं रह सकते। बादशाह की ड्योढ़ी पर जाकर चाकरी बजाना राजपूत के लिये बेहयाई है। परन्तु राजपूतों के लोहे में मोर्चा लग गया है। आज उनके भाग्य फूट गये हैं। इस पापी पेट ने बनियों की भाँति राजपूतों को भी अपना गुलाम बना लिया है। (तनी भौंह सीधकर) यह राजपूतों के विनाश के लक्षण हैं। (ऊँचे स्वर में) पर जब तक अमरसिंह की कमर में यह भयानक तलवार है और धड़ पर सिर है तब तक क्या चिन्ता है? राजपूत की शक्ति उसकी कठिनाइयों में है। अमरसिंह विपत्ति से भय नहीं खाता। आज या तो शाहशाही का दर्प चूर्ण होगा या राजपूतों की पत ही जायगी।

किसन— (हँस कर) पृथ्वीनाथ, सेवक सदैव ही सिर लिए रहता है। और क्या आज्ञा है?

अमरसिंह—जा घोड़ा तैयार कर। (किसन जाता है)

[रानी का प्रवेश]

रानी— प्राणनाथ शत्रु-सैन्य में निःशस्त्र जाना नहीं चाहिए। इस मेरी कटारी को लीजिए। यह असल सिरोही की है और इसमें मेरे सौभाग्य की आशीर्वाद समाविष्ट है। स्वामी समय पर यह सौ तलवारों का काम देगी। इसके साथ माता का आशीर्वाद और मेरा प्रेम जाता है। लीजिए।

[हाथ में देती है]

अमरसिंह—लाओ प्यारी आज इस से सौभाग्य का उपयोग किया जायगा। (कमर में छिपा लेता है)

[किसन का घोड़ा लेकर प्रवेश]

किसन— पृथ्वीनाथ घोड़ा हाज़िर है।

रानी— ठहर। (पुकार कर) दासियो आरती का थाल लाओ।

[दासी आरती का थाल लाती है]

रानी— (थाल का पूजन कर के) जय स्वामी की!

[राजा की आरती उतारती है और तिलक करती है। दासियाँ मंगल गान करती हैं।]

जय जाओ जी महाराज

जय जाओ जी रणबंका दूल्हा जय जाओ महाराज ॥१॥

अमरसिंह

भटनर भट आवें सीसोदी सरदार।
राठौरा भग ऊगावें साहस के भण्डार ॥
पधारो महाराज रण आयो ॥

[नाच का मनियों सहित गाते हुए प्रवेश]

राग—पीलू

रणबंका राठौर दुलार, रणत्यागी न आये हैं री।
कभी न दुख में दीन हुए हैं।
ये रजपूती दूध पिए हैं।
मारू धनी साहू के धन में सब सब जीते पाये हैं री।
रणबंका० ॥

रण-कंकण बांधे हुलसाये।
रण प्रांगण रणमान भाये ॥
मृत्यु-वधू की वरमाला को हँस-हँस कंठ लगाये हैं री।
रणबंका० ॥

जिनकी तेग प्रकट जग माहीं।
जीवन-मरण विषम सम माहीं ॥
मारू मारू की धुन में जिन शीश पराग बिखराए हैं री ॥
रणबंका० ॥

[गाते हुए सभी को शीश-छोड़ का निरख देती है]

अमरसिंह—(गुम्फा का सिर झुकाकर) देवी राजपूतों का अग्नि
समय उनकी महिमाओं की गाथा गा रहे हो

वीराङ्गना माता जब तक है तुम्हें भय नहीं।

तारा— पिताजी मेरे बाणों में खूब तीखी धार है। क्या आपने उसका चमत्कार उस दिन नहीं देखा जिस दिन मैंने उस वन्य पशु को विद्ध किया था?

अमरसिंह— देखा था बेटी मैं आशा करता हूँ इसी भाँति तू अपने शत्रु को भी विद्ध करेगी।

तारा— अवश्य पिताजी देखिए मेरे तीर। (कमर से तरकस खोलकर दिखाती है।)

अमरसिंह— धन्य बेटी धन्य!

[किसन तीर के साथ आता है]

किसन— महाराज!

अमरसिंह— (प्रसन्न होकर पास बुला कर) किसन आज अनहोनी होगी।

किसन— देखा जायगा महाराज।

[रामसिंह आता है]

रामसिंह— काकाजी मैं भी चलूँगा।

अमरसिंह— नहीं राम तुम महल की रक्षा करोगे। शायद अब हम न मिलें तो तुम बुद्धिमानी से रहना जिससे कुल में दाग न लगे।

रामसिंह— महाराज हम अवश्य मिलेंगे। चाहे इस जन्म में यहाँ चाहे उस जन्म में वहाँ। आप निश्चिन्त पधारिये।

अमरसिंह

अमरसिंह—अब चलो किसन।

किसन— चलिए पृथ्वीनाथ।

तारा— ठहरो पिताजी मैं राखी बाँधूगी। (राखी बाँध कर)

पिताजी अब आप अजेय हैं।

अमरसिंह—सच है बेटी, अब मैं चला।

[अमरसिंह मर्मभेदिनी दृष्टि से पुत्री और पत्नी की ओर

देखकर घोड़े को एड़ मारता है। घोड़ा गर्व सहाकर हवा हो जाता

है। पीछे-पीछे किसना नाई भी जाता है।]

वीराङ्गना माता का सन्तान है तुम्हें भय नहीं।

तारा— पिताजी मेरे बाणों में खूब तीखी धार है। क्या आपने उनका चमत्कार उस दिन नहीं देखा जिस दिन मैंने उस वन्य पशु को विद्ध किया था ?

अमरसिंह—देखा था बेटी मैं आशा करता हूँ इसी भाँति तू अपने शत्रु को भी विद्ध करेगी।

तारा— अवश्य पिताजी देखिए मेरे तीर। (कमर से तरकश खोलकर दिखाती है।)

अमरसिंह—धन्य बेटी धन्य !

[किसन वीर के साथ से आता है]

किसन— महाराज !

अमरसिंह—(प्रसन्न होकर पास बुला कर) किसन आज अनहोनी होगा।

किसन— क्या आज्ञा महाराज।

[रामसिंह आता है]

रामसिंह— काकाजी मैं भी चलूँगा।

अमरसिंह—नहीं राम तुम महल की रक्षा करो। शायद अब हम न मिलें तो तुम बुद्धिमानी से काम करना जिससे तुम में दाग न लगे।

रामसिंह— महाराज हम अवश्य मिलेंगे। चाहे इस जन्म में यहीं चाहे उस जन्म में वहाँ। आप निश्चिन्त पधारिये।

अमरसिंह

अमरसिंह—तब चलो किसन।

किसन— चलिए पृथ्वीनाथ।

तारा— ठहरो पिताजी मैं राखी बाँधूगी। (राखी बाँध कर)

पिताजी अब आप अजेय हैं।

अमरसिंह—सच है बेटी अब मैं चला।

[अमरसिंह मर्मभेदिनी दृष्टि से पुत्री और पत्नी को देख चोट सी खा जाता है। घोड़ा गर्द उड़ाकर हवा हो जाता है। पीछे-पीछे किसना भाई भी जाता है।]

अंक दूसरा

पहिला दृश्य

[स्थान—नीमड़ा। समय—प्रातःकाल। रणछोड़ जी का मन्दिर। रानी आरती का थाल सम्मुख धरे गा रही है। तारा हाथ जोड़े सामने बैठी है।]

रानी— (मन्दिर के देवता को लक्ष्य करके) हे प्रभु! दासता के पाप से हमारी आत्माओं को मुक्त कीजिए और क्षत्रियों के लाज की रक्षा कीजिए। हे संसार के स्वामी! यदि क्षत्रिय ही पराई चाकरी करेंगे तो जगत में शौर्य कहाँ रहेगा। आज मेरी कठिन परीक्षा का दिन है। आज स्वामी अपनी क्षमता का प्रमाण दिखाने गये हैं। हे प्रभु! ऐसा न हो कि मैं अभागिन यों ही रह जाऊँ। हे प्रभु! उन्हें बल दीजिये, उन्हें विवेक दीजिये, उन्हें तेज और सामर्थ्य दीजिए। वे विजयी होकर लौटें। या यदि प्रभु की यही इच्छा है तो वीरगति प्राप्त करें। परन्तु अपमान और दासता के बन्धन में बंध कर न लौटें।

तारा— माता! इतनी अधीर होने की आवश्यकता नहीं है। पिताजी के सम्मुख खड़े होने की शक्ति किस योद्धा की है।

रानी— मेरी छाती पर हथौड़े पड़ें तो क्या हो?

तारा— पर बादशाह के इतना क्रुद्ध होने का कारण क्या है?

रानी— बेटी बात कहने योग्य नहीं पर कुसमय जान कहती है। शाहजादा दारा ने तेरे विवाह के लिए संदेशा भेजा था।

तारा— (क्रोध से थर-थर काँपती हुई) और वह सन्देशा कौन लाया था माँ?

रानी— अर्जुन तुम्हारा मामा। बेटी आगे पीछे सदैव उससे सावधान रहना।

[अर्जुन का प्रवेश]

अर्जुन— (हँसकर) आप लोग अभी मेरी बातें कर रही थीं मेरी उमर बड़ी है।

तारा— मामाजी आप कहाँ से आ रहे हैं?

अर्जुन— कुछ न पूछो तारा। शाहजादा दारा ने नाक में दम कर रखा है। वे और किसी पर भरोसा करते नहीं। उनके सब काम मुझे ही करने पड़ते हैं। शाम का गया सुबह का यहीं। देखो अभी भी मैं वहीं से आ रहा हूँ। (हँसता है)

रानी— भाई महाराज आज किले में गये हैं। सुना है बादशाह उनसे कुछ नाराज हैं।

अर्जुन— सब ठीक हो जायगा बाई जी आप कुछ भी चिन्ता न करें। यह आपका भाई अर्जुन सब ठीक कर गया। (हँसता हुआ) अब तो तारा स्यानी हो गई है अपना लाभ-हानि सोच सकती है। यदि यह हिन्दुस्तान की मलिका हो सके —

रानी— यह तुम क्या कह रहे हो !

अर्जुन— यही कि शाहजादा दारा

रानी— क्या चाहते हैं शाहजादा दारा ?

अर्जुन— वह तारा को मलिका बनाने को राजी हैं।

तारा— (गर्व से) मैं शाहजादे का मुँह इन चूड़ियों से कुचल दूँगी।

अर्जुन— यह बेसमझी की बातें हैं बहिन आप तारा को समझाइए।

रानी— बेटी शान्त हो। (अर्जुन से) भाई तुम क्षत्रियों की सभी बातें भूल गये। परन्तु शिष्टाचार भी नहीं जानते !

अर्जुन— भाई मैं आप लोगों का शुभ

रानी— तो अपनी यह शुभकामना अपने ही पास रखो भाई और कृपा कर तुम अभी चले जाओ। महाराज किले में गए हैं और हम प्रतिक्षण आपदा के द्वार पर हैं। अभी हमें विवाद के लिये अवकाश नहीं।

तारा— (क्रोध से) जाओ अभी चले जाओ।

अर्जुन— जाता हूँ परन्तु याद रखो तुम्हें मेरी शरण आना होगा।

[जाता है]

रानी— बेटी ऐसा प्रतीत होता है बादशाह से गहरी ठनगी।

अमरसिंह— बेटी, पराई सेवा करने से जो विपत्ति आती है वह आना ही चाहती है।

तारा— माताजी चिन्ता क्या है। राजपूत की कन्या या मिट्टी की बनी हुई नहीं होती। समय पर कर्तव्य अपना जौहर दिखा देगी।

रानी— बेटी, समय रहते यदि कुमार आ जाय तो ही अच्छा कौन जाने कल क्या हो। बेटी तुम उन्हें एक पत्र लिख दो। महाराज भी यही सलाह कर रहे हैं।

तारा— (लजाकर) माताजी (पैर के नाखून से जमीन कुरेदती है)

रानी— बेटी राजपूत की बेटी को साधारण स्त्रियों से अधिक साहसी होना चाहिये। एक पत्र लिखो बेटी। मैंने पुरोहित जी को बुला भेजा है वे आते ही होंगे।

तारा— जैसी आपकी आज्ञा। (जाती है।)

[दासी आती है]

दासी— अन्नदाता पुरोहितजी आये हैं।

रानी— उन्हें अभी ले आ। (दासी जाती है। पुरोहित आते हैं आशीर्वाद देते हैं)

पुरोहित— महारानी को क्या आज्ञा है?

रानी— आपको अभी-अभी यहां से उदयपुर जाना होगा और यह पत्र महाराणा को देना होगा। (एक पत्र और मुद्रा की थैली देकर) काम बहुत सावधानी से करना होगा।

पुरोहित— आप निश्चिन्त रहें रानीजी और कुछ सन्देश भी है।

[तारा की सखी आती है]

सखी— महारानीजी यह पत्र राजकुमारी ने दिया है।

रानी— (पत्र लेकर) यह पत्र कुमार राजसिंह को देना होगा।

[पुरोहित पत्रों को तथा थैली को पास में रखता है।]

पुरोहित— कुछ जबानी भी कहना होगा रानीजी!

रानी— यही कि पल-पल पर—क्षण-क्षण पर विपत्ति की आशंका है। एक क्षण के विलम्ब से भी न जाने क्या हो जाय।

[पुरोहित जाता है। रानी एक ओर जाती है।]

दूसरा दृश्य

[स्थान—अर्जुन गौड़ का घर। अर्जुन बड़बड़ाता हुआ आता है। समय—अपराह्न]

अर्जुन— (स्वगत) सब झगड़े-झंझट मेरे सिर! बड़ा आदमी होना भी एक आफत है। सलावतखाँ कहते हैं यह काम अर्जुन कर सकते हैं। शाहजादा भी कहते हैं यह काम अर्जुन कर सकते हैं। सारा जगत् में अर्जुन ही अर्जुन है। और कोई नहीं है। अब कहिए अकेला अर्जुन क्या-क्या करे? (हँस कर) यह अच्छी रही? किन्तु मैं भी एक कौआ हूँ मुझे अपने मतलब से मतलब। तारा को शाही दरबार में भेज दूँगा तो पाँच हजारी जात का मनसब तो मिला ही रक्खा है। परन्तु

बहिन भी मुझे तेज से छोड़कर देखती है और यह छोकरी तो सर्पिणी की भाँति फुफकार मारती है। जीजाजी के सामने यह प्रश्न रखना काम की उसी को मन में डालना है। तब क्या किया जाय? बस एक ही उपाय है—सिर्फ एक ही। (सोचता हुआ घूमता है)

एक नौकर—महाराज !

अर्जुन— (चौंक कर) महाराज क्या—मेरा सिर? मूर्ख! देखता नहीं हम सोच रहे हैं! बीच में बोल उठा—महाराज? क्या कहता है बोल!

नौकर— हजूर रानी साहिबा आपको याद करती हैं।

अर्जुन— कह दे आते हैं। अभी हम कुछ सोच रहे हैं। बहुत जरूरी मसला है।

नौकर— (हाथ जोड़कर) हजूर रानी साहिबा !

अर्जुन— अबे, रानी साहिबा के बच्चे (मारने दौड़ता है नौकर भाग जाता है) रानी ने विचार में ही विघ्न उत्पन्न कर दिया। (रानी आती है) अब क्या किया जाए। हाँ तो रानाजी भी एक मुसीबत हैं। उन्हें इस बात का कुछ ज्ञान नहीं होता कि कोई कुछ सोच रहा होगा। (रानी को देखकर) ओ हो! बड़ा अच्छा हुआ! इस समय मैं अपने आप तुम्हारी बात सोच रहा हूँ।

रानी— मैं भी तो सुनूँ आपकी जरूरी बात!

अब इस प्रभात पथ को जाने दीजिए। इस वृक्ष की छाया में यहीं विश्राम कीजिए। सूर्य का तेज कुछ कम होगा तो फिर शूकर ढूँढ लिया जाएगा।

राजसिंह— रिपुमर्दन देखा तो तुम वह शूकर गया किधर ?

रिपुमर्दन— अन्नदाता घोड़े थक गए हैं और धूप तेज है। थोड़ा विश्राम कर लीजिए।

राजसिंह— विश्राम नहीं। वह बर्छे का घाव खा कर भागा है मैं उसे बिना मारे विश्राम नहीं करूँगा। (आगे घोड़ा बढ़ाता है।)

रिपुमर्दन— (घोड़ा बढ़ा कर) जय अहेरिय कुमार मैं मार्ग को देख लूँ। अब घोड़ा आगे कहीं जाय मार्ग तो है ही नहीं।

(एकाएक शूकर झाड़ी से निकल कर भागता है।)

राजसिंह— (चिल्लाकर) वह रहा। बर्छी फेंक कर मारता है।

रिपुमर्दन— पशु बर्छी खा कर भाग जाता है।

राजसिंह— (घोड़े से उतर कर) अब यह दूर नहीं जा सकेगा।

रिपुमर्दन— (घोड़े से उतर कर)हाँ महाराज वह यहीं कहीं झाड़ी में घुस जाएगा। (दोनों आगे बढ़ते हैं)

[एक भिल्ल बालिका भाला उठाए कर उसी से शूकर को मारती हुई आती है।]

राजसिंह— (आश्चर्य से) कौन है यह वीर बाला ?

भिल्ल बाला—यह तुम्हारा शिकार।

राजसिंह—(सूअर को मारकर) यहाँ और भी कोई सूअर है?

बालिका—बहुत हैं पहाड़ के उस पार चलो।

राजसिंह—(हँसकर रिपुमर्दन से) क्या कहते हो? इस छोकरी के साथ उस पार जाना स्वीकार करते हो?

बालिका—क्या तुम भय करते हो?

राजसिंह—(हँस कर) निस्सन्देह हम डरते हैं।

बालिका—तब ठहरो मैं वहीं लिये आती हूँ।

[बालिका एक ओर को भाग जाती है।]

राजसिंह—रिपुमर्दन यह इस वन्य भूमि का प्रताप है। यह वीर बालिका अभी से भय को नहीं जानती। कोई भिल्ल-कुमारी प्रतीत होती है।

रिपुमर्दन—कुमार की जय हो। भिल्ल-कन्याएं क्या रनवास में नहीं रह सकतीं? कुमार की इच्छा यदि इस जंगली चिड़िया को पालने की हो तो इसे ले चलूँ।

राजसिंह—(हँस कर) सच्ची बात है। देखो वह एक सूअर का बच्चे ला रही है।

बाला—(आकर सूअर को गड्ढे में मारती हुई चिल्लाकर) मारो मारो।

[पशु एक सिपाही के पीछे को जोर से लिपटा देता है। सिपाही गिर जाता है। सब हट-हट करते हैं। बालिका ताली बजाकर हँसती है।]

रिपुमर्दन— (लड़की से) क्यों री चित्तौड़ चलेगी ?

कालिका— क्यों ?

रिपुमर्दन— राजमहल में रहने को।

कालिका— क्यों ?

[रिपुमर्दन अपना घोड़ा बढ़ाकर कालिका को भयभीत करने की चेष्टा करता है। कालिका उठकर दो-तीन सपाटे चाबुक से मारकर घोड़े को व्याकुल कर देती है। घोड़ा भाग जाता है। कालिका हँसती है।]

राजसिंह— वाह-वाह ! (आगे बढ़ कर मोतियों की माला दिखा कर) लड़की यह लेगी ?

कालिका— (कौतूहल से देख कर) मुझे ?

राजसिंह— (उसके गले में डाल कर) कैसा है !

कालिका— (हँसती हुई अपनी घुँघचियों की माला दिखा कर) यह अच्छी है।

राजसिंह— तेरा घर कहाँ है ?

लड़की— तुम हमारे घर चलोगे ?

राजसिंह— कहाँ ?

लड़की— वही सामने।

राजसिंह— चलूँगा। घोड़े पर बैठेगी ?

लड़की— (उत्सुकता से) बैठूँगी।

[राजसिंह उसे उठा कर घोड़े पर बैठा लेते हैं। सब हँसते चले जाते हैं।]

[भील का प्रवेश]

भील— नीमू, यह क्या मामला है ?

नीमू— मैं घोड़े पर सवार हूँ। तुम भी चढ़ाओ बापू ?

रिपुमर्दन—(पास आ कर) क्या यह तुम्हारी पुत्री है ?

भील— जी हाँ !

रिपुमर्दन—ये महाराजकुमार राजसिंह हैं। मुजरा करो

भील— राजकुमार जुहार (लड़की से) बापूड़ी उतर। राजा के घोड़े पर बैठ गई।

नीमू— (राजसिंह से हँसकर) बापू कहता है उतर।

राजसिंह— नहीं नीमू बैठी रह। (भील से) तुम्हारा नाम क्या है ?

भील— महाराज मेरा नाम सुक्खा भील है। (सामने झोपड़ा दिखाकर) यही दास का घर है। पधार कर पवित्र कीजिये।

[पुरोहित का आगे भागते प्रवेश]

पुरोहित— (भय से पीला पड़ता और कांपता हुआ) रक्षा करो रक्षा करो।

राजसिंह— [तलवार नंगी करके] निर्भय हो ब्राह्मण, क्या भय है ?

पुरोहित— पधारो महाराज मुझे भीलों ने पकड़ लिया।

राजसिंह— [क्रोध से मुक्खा से] यह क्या सुनता हूँ।

भील— कुमार, हमने इस ब्राह्मण को जासूस समझा था। यह आगरे से आया है।

राजसिंह— आप कौन हैं ? कहाँ से आये हैं कहाँ जायेंगे ?

पुरोहित— क्या मैं महाराज कुमार राजसिंह जी के दर्शन कर रहा हूँ ?

राजसिंह— देवता मैं राजसिंह हूँ। जो कहना हो निर्भय कहो।

पुरोहित— महाराज कुमार की जय हो। मैं आमेर से आया हूँ महाराज अमरसिंह पर कठिन समय आया है। आप राजपरिवार की सहायता कीजिए। ये पत्र है।

राजसिंह— (पत्र पढ़कर साथियों से) ठाकुरों युद्ध करने का समय उपस्थित है।

सब लोग—(तलवारें चूमकर) कुमार की जय हो। आज्ञा हो !

राजसिंह— इसी क्षण हम आगरे जाना होगा।

सब लोग—हम प्रस्तुत हैं अन्नदाता !

राजसिंह— वीरवर अमरसिंह की बादशाह से ठन गई है। वे वहाँ असहाय हैं। हमें तत्क्षण पहुँचना चाहिए।

सब लोग—चलिए महाराज !

भीम— महाराज मैं भी हाजिर हूँ।

राजसिंह— अभी मुझे तुम्हारी आवश्यकता नहीं। तुम केवल यह सन्देश राजमहलों में पहुँचा देना। (पत्र लिखकर देता है)

भीम— (पत्र लेकर) जो आज्ञा सरकार !

राजसिंह— (सखियों से) मीनू मैं जाता हूँ।

मीनू— क्यों राणा तुमने कहा ना था कि हमारे घर चलोगे। यह आँगन ही तो हमारा घर है।

राजसिंह— (मुस्करा कर) मौलू, मैं फिर आऊंगा।

[घोड़े पर सवार होकर तीव्रता से आगरे की दिशा को प्रस्थान]

चौथा दृश्य

[स्थान—आगरे का किला दीवान खास। समय—प्रातः की बेला बादशाह तख्त पर बैठे हैं। दीवान अमीर उमराव दरबारी वस्त्र में खड़े हैं। नौबतें बज रही हैं जगह-जगह सशस्त्र चोबदार खड़े हैं। बादशाह तख्त पर विराजमान हैं। अमरसिंह का प्रवेश दरबार में सनसनी फैल जाती है। वे गम्भीरता से बढ़कर बादशाह को बिना कोर्निश किये अपनी जगह पर आ खड़े होते हैं।]

बादशाह— (कुछ देर तिरछी नजर से अमरसिंह को देखकर) हम नागौर के राजा अमरसिंह से यह जवाब तलब किया चाहते हैं कि उसने किसलिए शाही नौकरी और हुक्म से इन्कार किया और दरबार में आकर मुजरा नहीं बजाया?

अमरसिंह—जहाँपनाह, अमरसिंह सल्तनत के लिए अपना मान मत तलवार चलाने से नहीं चूकता, पर ड्योढ़ी की नौकरी का भार दुस्सह है।

बादशाह— हमने हुक्म जारी किए थे?

अमरसिंह—मैं जहाँपनाह से अर्ज कर चुका था कि हुक्म सोच-समझ कर दिये जांय और यह मन्जूर किया जाय।

बादशाह— क्या और राजा लोग यह चाकरी नहीं बजाते ?

अमरसिंह—जहाँपनाह, उन्होंने अपनी गैरत बेच खाई है। वे राजपूत-कुलकलंक हैं। राठौर कभी यह अपमान नहीं सह सकते।

सलाबतखाँ—(बादशाह से) खुदावन्द बीकानेर के राजा कर्णसिंह ने शाही हुजूर में अर्जी दी थी कि राजा अमरसिंह ने बिना वजह मामूली-सी बात पर उनसे रार ठानी है।

बादशाह— वह मामूली वजह क्या है ?

सलाबत— जहाँपनाह, एक मतीरे की बेल झगड़े की जड़ है। कहते हैं कि उसकी जड़ नागौर की धरती में उगी थी मगर फल बीकानेर की धरती में लगा था। उस फल का मालिक कौन हो यही झगड़े की बात है। दो राजाओं के बीच इस महज मामूली बात पर झगड़ा होना मुनासिब नहीं जहाँपनाह !

बादशाह— (अमरसिंह से) क्या यह सच है ?

अमरसिंह—सच है जहाँपनाह !

सलाबत— जहाँपनाह, शाही हुक्म दिया गया था कि दोनों फरीक अपनी-अपनी फौजें वहाँ से हटा लें।

बादशाह— क्या उस हुक्म की तामील हो गई ?

सलाबत— जी हुजूर, अमीन वहाँ भेज दिया गया है और राजा कर्णसिंह ने अपनी फौजें वापिस बुला ली हैं। मगर राजा अमरसिंह शाही हुक्म से इन्कार करते हैं।

बादशाह— राजा अमरसिंह का क्या जवाब है ?

अमरसिंह—जहाँपनाह को मेरे इस घरेलू मामले में दखल देने की आवश्यकता नहीं है ।

बादशाह— (क्रोध से) हमारा हुक्म है कि आप अपनी फौज फौरन वापिस बुला लें ।

अमरसिंह—(दृढ़ता से) मैं चाहता हूँ कि जहाँपनाह अपना अमीन वापिस बुला लें वरना उसकी जान की सलामती का मैं जिम्मेदार नहीं ।

बादशाह— (गुस्से से लाल होकर) बख्शी सलाबतखाँ राजा अमरसिंह को शाही हुक्म सुना दिया जाय ।

सलाबत— (कोर्निश करके) राजा साहब आपने शाही हुक्म मानने में गफलत की है । इसलिए आप पर सात लाख रुपये जुर्माना किया जाता है ।

अमरसिंह—मैं यह जहाँपनाह के मुँह से सुनना चाहता हूँ ?

बादशाह— (क्रोध से) हमारी यही मर्जी है ।

अमरसिंह—(हँसकर) बहुत अच्छा जहाँपनाह यह जुर्माना कौन वसूल करेगा ?

सलाबत— अगर बादशाह सलामत हुक्म देंगे तो मैं यह शाही हुक्म बजा लाऊँगा ।

बादशाह— सलाबतखाँ को हुक्म दिया जाता है कि वह राजा अमरसिंह से जुर्माना वसूल करलें ।

सलाबत— (तैश से) राजा अमरसिंह आप राजी से जुर्माना अदा करेंगे या आपके मकान पर कुर्की लाई जाय ?

अमरसिंह— खाँ साहेब, महल तक जाने की क्या जरूरत है जुर्माना अमरसिंह के साथ है। जिसको भी ने धोखा खाया हो अभी वसूल कर ले। (कटार खींचकर) परन्तु इस अतीस साहे को धार पर रखकर जुर्माना अदा किया जायगा।

[सारे दरबार में सनसनी मच जाती है]

सलाबत— राजा अमरसिंह जुर्माना अदा करदो और दरबार के अदब का ख्याल रखो।

अमरसिंह—(आग आँखें करके) ले जुर्माना

सलाबत— मूल गँवा

[अमरसिंह का चीते की भाँति उछल कर कटार सलाबत की छाती में घुस देना। सलाबत का चीत्कार मार कर गिरना। दरबार में भगदड़।]

अमरसिंह—(बादशाह से) जहाँपनाह जुर्माने के रुपयों का बोझ जरा भारी था मिर्जाजी संभाल न सके। लीजिये आप खुद संभालिए। (जोर से कटार मारता है। वह खम्भे से टकरा कर एक बालिश्त पत्थर काट देती है। बादशाह भाग कर खिड़की की राह महल में चले जाते हैं और 'मार डालो' या 'पकड़ लो' का हुक्म देते जाते हैं।)

अमरसिंह—(खूब जोर से) यह राठौर अमरसिंह पाव गेर सोदा

हाथ में लिये निर्भय खड़ा है। मुगलों से कहता है जो कोई भाई का लाल जन्मा हो वह जुर्माना वसूल कर ले। (चारों ओर से हथियारबन्द सैनिक आकर अमरसिंह को घेर लेते हैं। किसन भाई अमरसिंह का साथ देकर जबरदस्ती बीच में घुस जाता है और सिपाही अमरसिंह के हाथ में पकड़ा देता है।)

किसन— महाराज की जय हो! सेवक के रहते श्रीमान् को इन तुच्छ सिपाहियों से लोहा लेने की आवश्यकता नहीं। किले के सब द्वार बन्द हैं। श्रीमान् पश्चिम की फसील पर चढ़ जाँय, मैं शत्रुओं को रोकता हूँ। (एक मुगल को अकेला हाथ मारता है।)

अमरसिंह—(एक ही वार में एक का सिर और दूसरे का धड़ उड़ाकर) और अब यहीं जूझ मरना ठीक है।

किसन— नहीं पृथ्वीनाथ, पानी भी वहाँ निरापद है। (पीछे हाथ बढ़ाकर दो सैनिकों को मारता है।)

अमरसिंह—(तलवार घुमाते हुए) क्या तुम्हें यहीं छोड़कर?

किसन— (तलवार घुमाते हुए) महाराज समय पर इसी भाँति सेवक काम आया करते हैं। यह मैं सदा चाहता रहा। समय नहीं है, महाराज!

अमरसिंह—(घोड़े को एड़ मारकर) किसन प्यारे विदा। ईश्वर अब हम दूसरी दुनिया में मिलेंगे।

किसन— (तलवार चलाते-चलाते) पृथ्वीनाथ, क्षमा महाराजजी और

राजकुमारी का प्रबन्ध करना है। आप महलों में पधारिये। जुहार महाराज!

[अमरसिंह बुर्ज पर चढ़ जाते हैं। किसन सिपाहियों को रोकता हुआ मारा जाता है और बुर्ज पर घोड़े समेत अमरसिंह को देखकर तलवार उठाकर प्रणाम करता है। तथा मूर्छित होकर गिर पड़ता है। सिपाही अमरसिंह पर टूटते हैं।]

अमरसिंह—(घोड़े को थपकी मारकर) आज बहादुर किसन ने खूब स्वामीभक्ति निबाही। आज रखना राजपूती शान को।

[दबाकर एड़ देते हैं घोड़ा सिंह की भाँति गर्ज कर उछाल भरता है और बुर्जी पर से कूद पड़ता है।]

पाँचवाँ दृश्य

[स्थान—शीशमहल महल का अन्तःपुर। महारानी मन्दिर के आंगन में एक चौकी के ऊपर लाल वस्त्र धारण किये बैठी हैं। सब दासियाँ यथास्थान खड़ी हैं। तारा एक झरोखे से राजपथ को देख रही है।]

रानी— बेटी क्या महाराज के आगमन का कुछ लक्षण दीखता है? उनके घोड़े की उड़ती हुई गर्द चार कोस से दीखती है। क्यों क्या तुम्हें कुछ आभास मिलता है।

तारा— नहीं माँ पिताजी नहीं दीख रहे!

रानी— मेरी दोनों भुजा फड़क रही हैं। दोनों भुजा, यह दो

भीलि का अशुभ शकुन कैसा ? (पुकार कर) दासी !

दासी— (विनीत भाव से सम्मुख आकर) महारानी की जय हो क्या आज्ञा है ?

रानी— कुँवर रामसिंह को यहीं बुला लाओ। देखो वे सिंह द्वार पर सेनानायक से बातें कर रहे हैं।

दासी— जो आज्ञा। (प्रस्थान)

रानी— (दूसरी दासी से) दासी !

दासी— (उपस्थित होकर हाथ जोड़कर) क्या आज्ञा है महारानी ?

रानी— जाकर भण्डार से मालती को बुला लाओ।

दासी— जो आज्ञा। [प्रस्थान]

रानी— (तीसरी दासी से) दासी।

दासी— (आगे बढ़कर हाथ जोड़कर) जयमाला को क्या आज्ञा है ?

रानी— तुम ठाकुर विक्रमसिंह को दक्षिण द्वार पर से बुला लाओ।

दासी— जो आज्ञा।

रानी— (तारा से) पुत्री क्या शिवालय की चोटी पर से भी महाराज के घोड़े की टापों से उड़ी धूल नहीं दीख पड़ती ?

तारा— नहीं माँ नहीं दीख पड़ती।

[रामसिंह का तलवार हाथ में लिए प्रवेश]

रामसिंह— क्या आज्ञा है माताजी ?

रानी— महाराज अभी नहीं पधारे ?

रामसिंह— नहीं काकीजी ।

रानी— किले में कुछ अनहोनी हुई है । वहाँ के समाचार जानने का क्या उपाय है ? क्या गुप्तचर गया है ?

रामसिंह— गया है काकीजी !

रानी— (कुमो से) तारा बेटी क्या कुछ दीखता है ?

तारा— नहीं माँ कुछ भी नहीं ।

रानी— पुत्र ?

रामसिंह— काकीजी ?

रानी— एक चर और भेजो ।

रामसिंह— जो आज्ञा ।

[दासी का प्रवेश]

दासी— कुमार चर आया है ।

रानी— उसे यहीं भेज दे ।

[दासी का प्रस्थान । चर आता है]

चर— महाराज किले में भीतर कुछ अनहोनी घटना घटी है ।

रानी— तुम भीतर नहीं जा सके ?

चर— नहीं माँ, किले के सब द्वार बन्द हैं । भीतर युद्ध हो रहा है ।

रामसिंह— किसमें युद्ध हो रहा है कुछ अनुमान हुआ ?

चर— नहीं कुमार भीतर का कोई समाचार जानना असम्भव है ।

रानी— तुम फिर जाकर समाचार लाओ ।

चर— जो आज्ञा माता। [प्रस्थान]

रानी— पुत्र।

रामसिंह— काकीजी।

रानी— महाराज जूझ गये।

रामसिंह— काकीजी अभी कुछ निश्चय नहीं कहा जा सकता।

रानी— ड्योढ़ियों पर कुल कितने योद्धा हैं?

रामसिंह— कुल दो सौ हैं।

रानी— उनका सरदार कौन है?

रामसिंह— यह सेवक है।

रानी— तुम सावधान रहना कुल में दाग न लगने पावे।

रामसिंह— काकी क्या मैं किले न जाऊँ?

रानी— हमें प्रतीक्षा करनी चाहिये सनिक धीरज धरो। द्वार रक्षा का ठीक प्रबन्ध करो जाओ। किन्तु ठहरो—कछु सैनिक बाग में लगादो।

[रामसिंह का प्रस्थान]

[मालती का प्रवेश]

मालती— क्या आज्ञा है माता!

रानी— (खड़ी होकर) मालती क्या सब प्रबन्ध ठीक है?

मालती— (आँखों में आँसू भरकर) हाँ मा, अन्तरपुर के निकट ही सम्पूर्ण तीस असमतौल पत्थरों एकत्र कर दिए गए हैं। बीच कमरे में बारूद बिछी है ऊपर महारानी का पलंग है।

रानी— (पति पर अपने मोतियों के दाने न्यौछावर करके) महाराज की जय हो। अभी आप यहीं ठहरिये। (पुकार कर दासियों से) अरी, आरती का थाल लाओ।

अमरसिंह—(कटार रानी के सामने रख कर) प्रिये तुम्हारी यह कटार अपनी करनी कर गुजरी। तमाम हिन्दुस्तान के प्रतापी बादशाह के सामने जिसके तेज से बड़े बड़े छत्रधारियों के दम भग होते हैं जिसकी मुगल सेना के पराक्रम से बड़े-बड़े राज्य ध्वंस हो गये उसी बादशाह शाहजहाँ की आँखों के आगे बख्शी सलाबतखाँ के कलेजे का लोहू इस प्यारी कटार ने तृप्त होकर पिया। वहाँ दरबार में उसकी लाश पड़ी है। अब मैं हूँ और बादशाह। मैं निकट हूँ गा- आगरे की जड़ हिला डालूँगा।

[दासियों का आरती का थाल लिये प्रवेश रानी वन्दन करके आरती उतारती है।]

चारण— घणी खम्मा अन्नदाता! जय पृथ्वीनाथ महाराज! अमर आसा रखा महाराज।

म ठाकर पन आपणों देखा राजपूताह।
मद मस्ती पग पावड़े मल्लावित गीयोर।
धीय नमाड़े दुगणों करणों मान, सिरोह।
परगणता धरा धणियो मोटो ऊमर मोह।

हाथ गुणन्ता मंगली मूँछें भौंह चढ़न्त।
बैयरी ही पहचाणियाँ बैयरी मरणाँ पन्थ।
अमल कसोसी ऊमगे होदाँ के सर रंग।
पीथल के घर ओळमा सीस न सीजे संग।
बिन मापे पाड़े हस्ती पोड़े गरज उतार।
तिण सूरांगे नाम से भड़ यों ही भटकार।

[सोरठ सुनाता है]

हीमत कीमत होय हीमत बिन कीमत नहीं।
करें न आदर कोय रद्द कागद ज्यूँ राजिया।
नरां भगत परमाण जो लगी संके अगन।
आगन तप्यो न भोग रावण मरता राजिया।
सूरा सोहि पिछाणिये लरे धरम के हेत।
पुरजा-पुरजा कट पड़े कबहुँ न छोड़े खेत।
सब जग रिपु हों, एक हों, तुम ही सब असहाय।
तेगो वाका सिंह का गमन है नहि भाय।

[राजदेव आकर अमरसिंह के पाओं का उपचार करता है।]

अमरसिंह—द्वारपाल वीरजसिंह को बुलाओ।

[सेवक जाता है]

[वीरजसिंह का प्रवेश]

वीरजसिंह—जय पृथ्वीनाथ सेवक उपस्थित है।

अमरसिंह—रामनाथजी अभी बादशाहजी को शाहिस्पुर गाँव का पट्टा कर दो और सिरो पाव देकर बिदा

है और फौजदार पर हुक्म भेज चुका है।

[रामसिंह का नङ्गी तलवार लिये प्रवेश]

रामसिंह— महाराज शाही फौज ने महल का घेरा छोड़ दिया यह हट रही है।

अमरसिंह—तुम भी सुन लो रामसिंह ये अर्जुन गौड़ कहते हैं कि बादशाह सुलह करने को तैयार है।

रामसिंह— पहले वह अपने अपराध की क्षमा माँगें।

अर्जुन— बादशाह के हम लोग चाकर हैं और गाढ़े समय में उसने हमें आश्रय दिया था। फिर यहाँ उसका बल बहुत है और हम अल्प हैं। सब बातों पर विचार करके ही हमें निर्णय करना चाहिये।

रामसिंह— (तलवार दिखाते हुए) यह तलवार जब तक हमारी सहायक है हमें और किसी सहायक की आवश्यकता नहीं है।

अर्जुन— भाई, अवसर देखकर ही काम करना बुद्धिमानी है।

अमरसिंह—मैं बादशाह को भी समाबतखाँ के घाट उतारूँ तो ही मेरा नाम अमरसिंह।

अर्जुन— आप क्रोध का त्याग दें और बादशाह के पास चल चलें तथा जिस भाँति दस्तूर है दरबार के नियम का पालन करें।

अमरसिंह—इस बात का क्या परिणाम है कि बादशाह दगा न करेगा ?

अर्जुन— मैं जामिन हूँ।

रामसिंह— हम बादशाह पर अब विश्वास नहीं कर सकते।

[अमरसिंह चिन्ता करता है]

अर्जुन— भाई आप सोचकर देखिये, जब झगड़ा मिट रहा है तब रार मोल लेना बुद्धिमानी नहीं।

अमरसिंह—अगर बादशाह दगा करें तो ?

अर्जुन— तब हम मर-मिटेंगे और यह तलवार असावेंग जिसका नाम ! (तलवार नंगी करता है)

अमरसिंह—अच्छी बात है मुझे स्वीकार है।

रामसिंह— पर मेरा चित्त कैसा हो रहा है ?

रानी— मैं न जाने दूँगी। यह देखो मेरी दाहिनी भुजा फड़क रही है।

अर्जुन— जब इतना बड़ा बादशाह झुक गया तब मुगह का विरोध करना बुद्धिमानी की बात नहीं।

रानी— किन्तु किले में दगा हुई तो ? बादशाह ने गड़बड़ की तो क्या होगा ?

अमरसिंह—मेरी यह तलवार तो है।

अर्जुन— महाराज यदि युद्ध हुआ तो हम मुगल सल्तनत को उलट देंगे।

रामसिंह— तब मैं भी चलूँगा महाराज।

अमरसिंह—नहीं पुत्र, तुम महलों की रक्षा पर रहो।

रानी— स्वामिन् क्षमा आप ने आने का इरादा पक्का कर लिया ?

अमरसिंह—प्रिय चिन्ता की कोई बात नहीं।

रानी— (अर्जुन से) भाई मुझे, वचन दो कि तुम महाराज को सही-सलामत यहां पहुँचा दोगे।

अर्जुन— मैं वचन देता हूँ बाई !

रानी— शपथ लो तलवार छुआ !

अर्जुन— मैं तलवार छू कर शपथ लेता हूँ कि यदि महाराज को चार घड़ी में न ला आऊँ तो क्षत्रिय पुत्र नहीं।

रानी— (आंखों में आँसू भरकर) अच्छा हाथ दो भाई।

अर्जुन— (हाथ पर हाथ मार कर) लो हाथ दिया। इन्हें चार घड़ी में यहीं ला हाज़िर करूँगा।

रानी— (रोकर) हाय मुझे सब्र नहीं आता।

अर्जुन— (हंसकर) बहिन तुम मुझे गैर न समझतीं तो मेरा इतना अविश्वास न करतीं।

अमरसिंह—रानी अर्जुन हमारा सम्बन्धी है यह भी क्षत्रिय है।

रानी— हाय नाथ कैसे मन को समझाऊँ ?

अमरसिंह—चलो अर्जुन मैं तैयार हूँ। (पुकार कर) कोई है ? मेरा घोड़ा लाओ।

रामसिंह— बाबाजी मुझे भी साथ ले चलिये।

अमरसिंह—नहीं बेटा तुम महलों की रक्षा करना। मैं शीघ्र ही आऊँगा। (चला जाता है।)

अमरसिंह—(उठकर खड़ा होता है) चलो अर्जुन !

अर्जुन— (घोड़े पर चढ़ता है) चलिए महाराज !

रानी— (दौड़कर अर्जुन का हाथ पकड़ लेती है) अर्जुन मेरा यह सुहाग यह सिंदूर तेरे हाथ में है।

अर्जुन— (हँसकर) चिन्ता न करो बहिन मैं महाराज को अभी वापस लाता हूँ।

रानी— (रोती हुई) स्वामिन् मत जाओ। (घोड़े के पीछे चलती हुई गिर पड़ती है। अमरसिंह और अर्जुन दोनों चले जाते हैं।)

सातवाँ दृश्य

[स्थान-किला आगरा। समय-तीसरा पहर। बादशाह दीवान खास में बैठे हैं। सब झुके हुए उमरा हाजिर हैं।]

बादशाह— (एक ख्वाजासरा से) हम सब कुछ तफसील से सुना चाहते हैं।

ख्वाजासरा—हुजूर गुलाम ने आँखों देखा बयान किया है।

बादशाह— क्या अमरसिंह गली-गली ड्योढ़ियों तक आया था।

ख्वाजासरा—जी हुजूर, अर्जुन उस दरबार में आपकी निशान का यकीन करा कर कौन हार कर जिस में ले आया था।

बादशाह— फिर क्या हुआ ?

ख्वाजासरा—उसने खिड़की की राह ज्यों ही झुक कर भीतर कदम रखा कि अर्जुन ने पीछे से झट से तलवार से उसका सिर उड़ा दिया।

बादशाह— दगाबाज !

ख्वाजासरा—मगर बहादुर राठौर ने फुर्ती से कटार फेंक मारी और अर्जुन की नाक काट डाली।

बादशाह— बेईमानी नमक हरामी कमीने की सजा।

ख्वाजासरा—अलबत्ता वह अपनी वफादारी का इनाम हासिल करने हुजूर की कदमबोसी हासिल किया चाहता है।

बादशाह— उस दोजखी कुत्ते को हाजिर करो।

[ख्वाजासरा जाता है]

[अर्जुन का मुँह से पट्टी बाँधे हाथ में अमरसिंह का सिर लिये प्रवेश।]

अर्जुन— (*सिर पेश करके*) जहाँपनाह यह बागी अमरसिंह का सिर हाजिर है।

बादशाह— (सिर देखकर शोकभरे स्वर में) अफसोस एक बहादुर जवाँमर्द का इस तरह खात्मा हो गया।

अर्जुन— हुजूर इस सेवक को इस मुहिम में बड़ी बहादुरी खर्च करनी पड़ी।

बादशाह— (व्यंग्य से) हम तुम्हारी बहादुरी का पूरा हाल सुनना चाहते हैं।

अर्जुन— जहाँपनाह मुझे जो-जो जौहर दिखाने पड़े, वह तो बयान से बाहर हैं। इस सेवक को इस बागी को मारने के लिए जबरदस्त लड़ाई लड़नी पड़ी। कहाँ तक कहूँ बड़े कष्ट उठाने पड़े और जान की जोखिम भी उठानी पड़ी।

बादशाह— (क्रोध रोककर) शायद सबसे गहरा घाव तुम्हारी नाक में आया है और नाक कट गई है।

अर्जुन— जहाँपनाह छीना झपटी में न जाने किसका खंजर लग गया और नाक कट गई।

बादशाह— अमरसिंह की लाश कहाँ है।

अर्जुन— वह खिड़की में रखी है।

बादशाह— (क्रोध से) और अब तुम इनाम का ख्याल ले आये हो ?

अर्जुन— जी हाँ हुजूर, बन्दे को बारह सौ गाँवों का पट्टा और अमरसिंह का रुतबा इनायत हो।

बादशाह— इतमीनान रखो। तुम्हारी काबिलियत और खिदमत की कद्र की जायगी। (एक मुसाहिब से) इस बदनसीब दोजखी कुत्ते से कहो कि सच-सच सारा मामला हमारे हुजूर में बयान करे। इसने किस तरह अपने सगे रिश्तेदार अमरसिंह को धोखा दिया सब सच बयान करे। अगर झूठ बोलेगा तो जिन्दा जमींदोज कर दिया जायगा और लाश कुत्तों से नुचवाई जायगी।

अर्जुन— जहाँपनाह गुलाम की जाँ बख्शी हो। मगर इनामी के ख्याल से मैंने यह काम किया।

बादशाह— तूने अमरसिंह को धोखा नहीं दिया ?

अर्जुन— गुलाम ने ऐसा ही किया।

मुसाहिब— तुम उसे माफी दिलाने का कौल-करार करके नहीं लाये थे ?

अर्जुन— मैंने ऐसा ही किया था जहाँपनाह !

बादशाह— तुम महज़ दगाबाज़ और नमकहराम ही नहीं हो बल्कि उन लोगोंसे और कमीने गुनहगारों में हो जो हर कौम में बदकिस्मती से पैदा होते हैं और जिनकी वजह से कौम की कौम को नीचा देखना पड़ता है। तुम्हारे जैसे गुनहगारों को माफ करना और उन पर रहम करना न सिर्फ इन्साफ का गला काटना है बल्कि गुनाह करना है। अमरसिंह तख्त का दुश्मन न था। वह कसूरवार था और उसका कसूर महज यही था कि वह अपनी फजीहत बर्दाश्त नहीं कर सकता था। वह एक जवाँमर्द बहादुर था। उसका कत्ल एक ऐसे कमीने आदमी ने किया जो उसका हकीकी रिश्तेदार और राजपूत है। (ख्वाजासरा से) इस दोज़खी का सिर मुंडा कर और काला मुँह कर, गधे पर चढ़ाकर शहर में घुमाओ और ढोल पीटकर इसकी करनी दुनिया पर रोशन कर दो। फिर जल्लादों के सुपुर्द कर दो कि वे इसे जिन्दा जमींदोज कर दें।

[ख्वाजासरा अर्जुन को पकड़ कर ले जाते हैं। वह रोता चिल्लाता जाता है।]

बादशाह— (एक मुसाहिब से) अमरसिंह की लाश को बुर्ज पर रख दिया जाय और वह लाश दिन रात वहीं रखी रहे।

जाफ़र फ़ौजदार को हुक्म है कि फ़ौज का एक दस्ता लेकर नौमहला दख़ल कर लें और वहाँ का तमाम ख़ज़ाना शाही हुज़ूर में पेश करें। इसके सिवा अमर सिंह के भतीजे को फ़ौरन शाहामावदगी ख़ज़ाने को हाज़िर करें।

[दरबार बर्ख़ास्त होता है। जाफ़रखाँ और मुसाहिब बादशाह को कोर्निश करके विदा होते हैं। सब दरबारी दंग होते हैं]

बादशाह—(स्वगत) सल्तनत भी कैसी तकलीफ़देह चीज़ है। बादशाह होना भी एक बदनसीबी है। अमरसिंह की ख़ता पर अगर मैं रहम करूँ तो दरबारी चौंक उठेंगे। अमरसिंह ने शाही अदब भंग किया है और ऐसा काम किया है जो तख़्त-मुग़लिया की तवारीख़ में पहले कभी नहीं हुआ। अब देखना है, क्या होना है?

[सोचता हुआ जाता है]

अंक तीसरा

पहिला दृश्य

[स्थान—शीशमहल। समय—मध्याह्न। रानी राम वाले मन्दिर के भीतरी कक्ष में प्रतिमा के निकट ध्यानस्थ बैठी है। सामने प्रतिमा के आगे धूप जल रही है। दासियाँ यथास्थान खड़ी हैं।]

रानी— (मन्दिर के देवता को लक्ष्य करके) हे देव! मैंने सदैव ही मन-वचन-कर्म से धर्म निबाहा है। आज मेरी कुशल नहीं। आज मुझ मूर्खा ने विजयी स्वामी को फिर से काल के मुँह में भेज देने की मूर्खता की है। हे देव, अब तुम्हीं उनकी रक्षा करो। हाय! मेरा मन कैसा कैसा हो रहा है।

एक दासी—रानी माँ! आप चिंतित न हूजिये।

रानी— मैं धीरज नहीं रख सकती। मेरा मन बेचैन है। कोई भय भावना मेरे मन में प्रवेश कर गई है। यह कैसो अपशकुन यह शृगाल दिन में रो रहा है। हे भगवान अब क्या होने वाला है!

[रामसिंह का भागे गिरते बदहवास प्रवेश]

रामसिंह—काकीजी!

रानी— (गद्गद होकर) समझ गई महाराज वीरगति को प्राप्त हुए।

रामसिंह—काकीजी ! हम लुट गये। (रोता है।)

रानी— धीरज रख पुत्र ! यह राजपूत के रोने का समय नहीं। क्या इतने बड़े बादशाह ने दगा की ?

रामसिंह— नहीं काकीजी ! पापी मामा ने दगा की ?

रानी— (स्तब्ध होकर) अर्जुन ने पाप किया !

रामसिंह— उस अधम ने खिड़की की राह से आकर—ज्योंही महाराज सिर झुकाकर घुसे, पीछे से तलवार का भारी वार किया।

रानी— (क्षणभर स्थिर दृष्टि से आकाश की ओर देखकर) अन्त में वह दुर्धर्ष वीर इस विश्वासघाती के हाथ इस भाँति काम आये ! जिसकी बहिन के मस्तक पर उन्होंने सौभाग्य चिह्न अङ्कित किया पुत्र ! उस कायर-कुकर्मी अधम का सिर काटकर मेरे सम्मुख ले आओ। मैं देखकर कलेजा ठण्डा करूँ।

रामसिंह— वह अपनी करनी का फल पा चुका। बादशाह ने उस विश्वासघाती का सिर मुँड़ा काला मुँह करा कर नगर में घुमाया—फिर जिन्दा जमीन में गड़वा दिया।

रानी— (आँसू को पोंछती हुई) हाय, यह मृत्यु क्या है और यह जीवन भी ! राजपूतनी का जीवन कितना स्वल्प-कालीन होता है। कल मैं अस्फुटित कुसुमकलिका थी—आज उसका सौरभ विकास हुआ आज ही यह सूख कर समाप्त हो गई। स्वामी के प्यार की वैभव एक ओर

देगी। यह चिता कभी मधुर और तीखी लगती थी। आज उसके नाम पर मृत्यु कैसी प्यारी लगती है। यही मृत्यु अपनी सुखद गोद में भरकर मुझे स्वामी तक पहुँचा देगी। (ऊपर देख कर) हे स्वामी! हे प्राणेश्वर! तुम्हें प्रतीक्षा करनी पड़ी। ठहरो! मैं आती हूँ। (राम सिंह से) पुत्र!

रामसिंह— (हाथ जोड़ कर) आज्ञा जी!

रानी— अब अन्तिम व्यवस्था करो। मैं सती होऊँगी।

रामसिंह— जो आज्ञा काकीजी! लेकिन बादशाह ने हुक्म दिया है कि महाराज का शरीर सात दिन बुर्ज पर रक्खा रहे। नौ-महला दखल करने और खजाना जब्त करने को भी बादशाह ने फौजें भेजी हैं।

रानी— (नागिन की भाँति चोट खाकर) क्या कहा? जिस नर शार्दूल ने जीते-जी अपमान न सहन किया और एक बात पर भरे दरबार में लोहा लिया उसके मृत शरीर का ऐसा अपमान होगा? हमें अपनी आन निभानी होगी। (सिंहनी की भाँति गर्ज कर) मैं अभी किले में जाऊँगी मेरे वीर पति की तलवार लाओ!

रामसिंह— (रानी के पैर छूकर) काकीजी जब तक यह सेवक जीवित है आप को कष्ट करने की आवश्यकता नहीं! आप आज्ञा दीजिए, मैं महाराज का शरीर लेने जाता हूँ। परन्तु काकीजी, यहाँ की रक्षा का

रानी— किन्तु नहीं वीर, तुम महाराज का शरीर तुरन्त ले आओ।

अमरसिंह— जो आज्ञा माताजी! हाँ मेरी एक विनय है। यदि उचित समझी जाय तो वस्सूजी को संदेश भिजवा दें। वे राज्य के पुराने चाकर हैं आमेर ही में हैं। महाराज से या ही एक साधारण बात उनकी खटक गई थी। वे बड़े वीर हैं।

रानी— पुत्र, यदि वे न आवें?

अमरसिंह— जब महाराज ही न रहे तो द्वेष किससे? फिर ऐसे समय क्षत्रिय ऐसी बातों का विचार नहीं करते। एक सन्देश शाहबाज पठान के पास भेज दीजिए और बूँदी को साँडनी भेज दी जाय।

रानी— (आँसू गिराकर) जाओ वीर, तुम तैयारी करो। मैं वस्सू जी को संदेश भेजती हूँ।

[रानी एक तरफ चली जाती है]

दूसरा दृश्य

[स्थान—आमेर। वस्सूजी की हवेली। समय—मध्याह्न रसोईघर का बाहरी भाग। रानी और दासियाँ। वस्सू जी की रसोई का सरंजाम हो रहा है।]

दासी— स्वामीजी अनर्थ हो गया!

रानी— क्या री?

दासी— वीरवर अमरसिंह काम आये।

रानी— सुन तो चुकी हूँ।

दासी— और उनकी लाश बुर्ज पर डाल दी गई है।

रानी— सुना तो यही है।

दासी— हाड़ी रानी सती होना चाहती हैं।

रानी— यह उनका धर्म है।

दासी— पर उनके पास सहायक कौन है जो बादशाह से लाश ले।

रानी— राजपूतनी के हाड़ा सम्बन्धी तो हैं।

दासी— रानीजी अपराध क्षमा हो वे क्या इस समय यहां हैं?

रानी— तो इसमें मैं क्या कर सकती हूँ?

दासी— हाड़ी रानी ने महाराज से सहायता मांगी थी।

रानी— फिर?

दासी— महाराज ने शरणागत अबला की सहायता देने से इन्कार कर दिया।

रानी— है इसमें बुरा क्या हुआ रा?

दासी— रानीजी हम अल्पमति दासी हैं अपराध क्षमा हो।

रानी— वह तो सही अपराध की क्या बात है?

दासी— रानीजी स्वर्गीय महाराज हाड़ी रानी के पति के सेवक थे उन्होंने उनका नमक खाया था।

रानी— हूँ, तो तुम लोग भी महाराज को इस कर्म का पतित समझती हो। क्यों?

दासी— सेविका का यह साहस नहीं। पर महारानी सर्वत्र यही चर्चा हो रही है। हमारे महाराज तो बड़े वीर हैं।

रानी— वीर हैं यह तुमसे किसने कहा?

दासी— यह बात तो जगद्विख्यात है।

रानी— होगी।

दासी— महाराज भोजनार्थ पधार रहे हैं।

रानी— तो लोहे के थाल में भोजन परोस। लोहे का ही लोटा रख दे।

दासी— (विस्मित होकर) यह क्या रानीजी?

रानी— और सुन।

दासी— जी।

रानी— यदि महाराज या मैं इस सम्बन्ध में कुछ बात करें तो तुम लोग चुपचाप निकल जाना।

दासी— जो आज्ञा रानीजी।

[दासी का प्रस्थान]

दूसरी दासी—सरकार भोजनार्थ पधार रहे हैं।

रानी— अच्छी बात है।

[जसवंत का प्रवेश]

रानी— आइए महाराज, इधर पधारिए। यह आसन है।

वस्तूजी— (लोहे के पात्रों को देखकर) हैं यह क्या बेहूदगी है! किसने यह साहस किया ?

रानी— (विस्मित होने का भाव करके) क्या हुआ महाराज ?

वस्तूजी— किसने यह लोहे के पात्रों में भोजन परोसा है ? सोने चाँदी के पात्रों का क्या हुआ ?

रानी— (दासी से) क्यों री यह क्या बात है किसने यह अपराध किया है ?

वस्तूजी— मैं उसे क्षमा नहीं करूँगा। मेरा ऐसा अपमान! यह साहस किसने किया शीघ्र बोलो ?

रानी— बोलो री महाराज उसका सिर उतार लेंगे यह भयंकर अपराध है। इसके लिए क्षमा नहीं है।

[सब दासियाँ चुप रहती हैं]

रानी— अरी अभागिनियो! क्या तुम्हें नहीं मालूम कि महाराज लोहे से भय खाते हैं। महाराज के सामने लोहा रखा किसने ?

वस्तूजी— (क्रोध में) रानी, तुम यह क्या कह रही हो ?

रानी— कुछ नहीं महाराज यह मूर्खाएं इतना भी नहीं जानतीं कि यह एक बनिये का चौका है। यहाँ सोने-चाँदी के पात्र ही शोभा देते हैं। यहाँ लोहे का क्या काम ?

वस्तूजी— (क्रोध में लाल होकर) क्या यह बनिये का चौका है क्या मैं लोहे से भय खाता हूँ ?

रानी— महाराज आपके इस गुण को यह मूर्खा नहीं जानती। अवश्य इसका आप सिर काट डालिए।

जसवन्त— (क्रोध से काँपता हुआ आगे बढ़कर) क्या तुम मेरा उपहास कर रही हो रानी!

रानी— नहीं महाराज! क्या यह असत्य है? यदि आप लोह से भय नहीं खाते तो क्या आप इस समय यहाँ कौसा आरोगने पधारते! क्या यही आपके क्षत्रियत्व की मर्यादा है। राठौर की लाश कुर्सी पर पड़ी हो जिस का आपने पीढ़ियों से नमक खाया है, और उनकी रानी ने मुँह से बोल कर सहायता माँगी और आप ने शरणागत अबला को निराश कर दिया।

जसवन्त— उन्होंने मेरा अपमान किया है।

रानी— आप इसके यथार्थ पात्र हैं।

जसवन्त— वे मुझे दासीपुत्र कहते हैं।

रानी— आप निश्चय दासीपुत्र हैं (आगे बढ़कर तलवार छीन कर) जाइये महाराज, स्वादिष्ट भोजन सोने-चाँदी के थालों में आरोगिये। दासीपुत्र की यह अभागिनी पत्नी दुर्भाग्य से असल क्षत्राणी है। यह अभी दासी पुत्र के स्वामी की लाश को लोहा बजाकर लावेगी। देखूँ प्रतापी मुगलों की तलवार में कितना पानी है! अभी री दासियो तलवार लेकर मेरे साथ चलो।

[जाना चाहती है]

बल्लूजी— महारानी!

रानी— (लौटकर) क्या है महाराज?

बल्लूजी— (आगे बढ़ पुरुषे देखकर) मुझे क्षमा करो महारानी। मैं क्रोध में अंधा हो गया था। तुम वीरांगना हो धन्य हो तुम! तुमने मेरी आँखें खोल दीं और मेरी लाज रखली। लो यह तलवार अपने सौभाग्यशाली हाथों से मेरी कमर में बाँधो। फिर देखना इसके जौहर!

रानी— (तलवार को माथे से लगा कर) धन्य महाराज! यह तो मेरे वीर स्वामी का प्रताप है जिनकी चरण दासी बनकर मेरा जन्म सफल हुआ है। जिनकी वीरता का डंका राजपूताने में घर घर बज रहा है। यह सती स्वामी का स्वर है। लीजिए महाराज इस कृपाण को सम्भालिये और कर्तव्य का पालन कीजिए। (तलवार देती है)।

बल्लूजी— (तलवार बाँधकर अपनी पगड़ी पर हाथ रखते हुए) रानी अब मैं चला।

रानी— जाइए महाराज हाड़ी रानी बड़े संकट में है।

[राजा का तेजी से प्रस्थान]

रानी— हाय! मेरे लिए भोजन भी थाल में बिना भोजन किए चले गए। अब इस जन्म में दर्शन न होंगे।

हाय रे कठोर क्षत्रिय धर्म !! (पछाड़ खाकर धरती पर गिर पड़ती है)

तीसरा दृश्य

[स्थान—शहबाजखाँ का डेरा । एक पठान युवक अभ्यास के साथ बैठा तलवारें साफ कर रहा है । पौ फट रही है । दो चार पठान पास बैठे हैं । एक नौकरी बजाकर हुक्का पी रहा है । शहबाजखाँ ने दाढ़ी पर मेंहदी बाँध रखी है]

[पत्रवाहक का प्रवेश]

पत्रवाहक— क्या यही शहबाजखाँ पठान का डेरा है ?

शहबाजखाँ—(खड़े होकर) यही गुलाम शहबाजखाँ पठान है । आप कहाँ से आये हैं मेहरबान ?

पत्रवाहक—मैं नागौर से आ रहा हूँ ।(पत्र देता है)

शहबाजखाँ—अरे मेहरबान दोस्त महाराज अमरसिंह का नियामतनामा लाए हो ?

(पत्र को चूम और आँखों से लगाकर) खुदा उस बहादुर को सलामत रखे जिसने प्यासे को पानी देकर उसकी जान बचाई । उसी के काम यह जिस्म बोटी-बोटी कट कर काम आये यही आरजू है । महाराज अच्छे तो हैं ?

पत्रवाहक—आप तो अब हाथोंहाथ पत्र पढ़ने को आतुर हैं ।

शहबाजखाँ—(पत्र पढ़कर उस जगह से खड़ा हो जाता है । दूसरों से

पर हाथ रखकर) ऐं! यह क्या सुन रहा हूँ। मेरे मेहरबान महाराज मारे गये? (दोनों हाथों से माथा पकड़कर बैठता है) जिसकी बराबरी का शेरदिल जवाँमर्द पैदा नहीं हुआ। (पुत्र से) बेटा नबीरसूल! अभी कबाल के सब लोगों को इकट्ठा करो।

नबीरसूल— बहुत अच्छा अब्बा जान! (जाता है)

[धीरे-धीरे बहुत से पठान इकट्ठे हो जाते हैं।]

शहबाज़खाँ—भाइयो! हमारे सामने एक निहायत नाज़ुक सवाल दरपेश है। आप लोगों को मालूम है कि नागौर के राजा अमरसिंह राठौर ने एक बार मेरी जान बचाई थी और मुझे पगड़ीबदल भाई बनाया था। हालाँकि मैं नाचीज़ सिपाही था और वे राजा और शाही मनसबदार थे। उसी दिन से मैंने जुबान दी थी कि यह जिस्म और रूह आपकी हुई। तब से खुदा से यह दुआ मनाता रहा कि खुदा वह दिन दे कि आप पठान की दोस्ती का जौहर देखें। आज राजा अमरसिंह मारे गये हैं और बादशाह ने उनकी लाश बुर्ज पर रखवा दी है। बेचारी रानी ने मुझ नाचीज़ को इस गाढ़े वक्त में याद फर्माया है और यह पठान अब अपने को शाही फौज से बागी क़रार देता है। यह मेरी इज्जत का और इन्सानियत का

दराजे का सवाल है। यह पठान की तलवार उसके दोस्त के लिये है। कौन बहादुर मेरे साथ चलेगा?

अमीरखुसरू—अब्बाजान! मैं रानी के लिये जान दूंगा।

शाहबाज़खाँ—शाबाश बेटे! और कौन जवांमर्द है?

एक बूढ़ा सिपाही—दोस्ती दुनियाँ में बड़ी चीज़ है। दोस्ती के लिये जीते सब हैं पर मरने वाले बहुत कम हैं। दोस्त शाहबाज़! मैं भी तुम्हें अपना सर नज़र करता हूँ।

शाहबाज़खाँ—आप सचमुच सैय्यद हैं। खानदानियत आपकी आँखों से टपकती है। और कौन बहादुर है?

एक नवयुवक—हम बादशाह के सिपाही हैं हमने उसका नमक खाया है हम बागी नहीं हो सकते।

शाहबाज़खाँ—अगर बादशाह तुम्हारे रुतबे को जलील करता, तब भी तुम शाही नमक हलाली का दम भरते? हम शाही नौकर जरूर हैं मगर सिपाही का फ़र्ज़ अदा करने को। अगर बादशाह सलामत हम पर ऐसा भार डालता है कि हम इन्सानियत के फ़र्ज़ को अदा करना ज्यादा बेहतर समझें तो हमें लाज़िम हो जाता है कि हम नौकरी को गुलामी को बालाएताक रखें क्योंकि बादशाहों का बादशाह वह खुदावन्द करीम है जिसने हमें इन्सानियत दी है। इन्सानियत का

पर हाथ रखकर) ऐं! यह क्या सुन रहा हूँ। मेरे महरबान महाराज मारे गये? (दोनों हाथों से आँखें ढककर लेता है) जिसकी बराबरी का शहज़ोर जवाँमर्द पैदा नहीं हुआ। (पुत्र से) बेटा नबीरसूल! अभी पठान के सब लोगों को इकट्ठा करो।

नबीरसूल— बहुत अच्छा अब्बा जान! (जाता है)

[धीरे-धीरे बहुत से पठान इकट्ठे हो जाते हैं।]

अरसलाखाँ—भाइयो हमारे सामने एक निहायत नाज़ीक सवाल दरपेश है। आप लोगों को मालूम है कि नागौर के राजा अमरसिंह राठौर ने एक बार मेरी जान बचाई थी और मुझे पगड़ीबदल भाई बनाया था। हालाँकि मैं मामूली सिपाही था और वे राजा और शाही मनसबदार थे। उसी दिन से मैंने कुरान की थी कि यह जिस्म और रूह आपकी हुई। तब से खुदा से यह दुआ मनाता रहा कि खुदा वह दिन दे कि लोग पठान की दोस्ती का जौहर देखें। आज राजा अमरसिंह मारे गये हैं और बादशाह ने उनकी लाश बुर्ज पर रखवा दी है। ऐसा रानी ने मुझ नाचीज़ को इस गाढ़े वक्त में याद फर्माया है और यह पैगाम सब क़ौम को शाही फौज से बागी करार देता है। यह मेरी इज्जत का और इन्सानियत के

तलवार का सवाल है। यह पठान की तलवार उसके दोस्त के लिये है। कौन बहादुर मेरे साथ चलेगा?

नबीरसूल—अब्बाजान! मैं गनी के लिये जान दूँगा।

शाहबाजखाँ-शाबाश बेटे! और कौन जवाँमर्द है?

एक बूढ़ा सिपाही—दोस्ती दुनियाँ में बड़ी चीज है। दोस्ती के लिये जीते सब हैं पर मरने वाले बहुत कम हैं। दोस्त शाहबाज! मैं भी तुम्हें अपना सर नजर करता हूँ।

शाहबाजखाँ-आप असल सैय्यद हैं। इन्सानियत आपकी आँखों से टपकती है। और कौन बहादुर है?

एक नवयुवक—हम बादशाह के सिपाही हैं हमने तख्त का नमक खाया है, हम बागी नहीं हो सकते।

शाहबाजखाँ-अगर बादशाह तुम्हारे रुतबे को जलील करता तब भी तुम शाही नमक हलाली का दम भरते! हम शाही नौकर जरूर हैं मगर सिपाही का फर्ज अदा करने को। अगर बादशाह सलामत हम पर ऐसा भार डालता है कि हम इन्सानियत के फर्ज को अदा करना ज्यादा बेहतर समझें तो हम लाजिम हो जाता है कि हम नौकरी की गुलामी को बालाए ताक रखें क्योंकि बादशाहों का बादशाह वह खुदावन्द करीम है जिसने हमें इन्सानियत दी है। इन्सानियत का

पर हाथ रखकर) ऐं यह क्या सुन रहा हूँ। मेहरबान महाराज मारे गये ? (दोनों हाथों से म पकड़कर बैठा है) जिसकी बराबरी का दरदिल अमी पैदा नहीं हुआ। (पुत्र से) बेटा नबीरसूल! अमी मन्दोम के सब लोगों को इकट्ठा करो।

नबीरसूल— बहुत अच्छा अब्बा जान! (जाता है)

[धीरे-धीरे बहुत से पठान इकट्ठे हो जाते हैं।]

रहमानुल्लाँ— भाइयो हमारे सामने एक निहायत नाजुक सवाल दरपेश है। आप लोगों को मालूम है कि नागौर के राजा अमरसिंह राठौर ने एक बार मेरी जान बचाई थी और मुझे पगड़ीबदल भाई बनाया था। हालांकि मैं नाचीज सिपाही था और वे राजा और शाही मनसबदार थे। उसी दिन से मैंने जुबान दी थी कि यह जिस्म और रूह आपकी हुई। तब से खुदा से यह दुआ मनाता रहा कि खुदा वह दिन दे कि लोग पठान की दोस्ती का जौहर देखें। आज राजा अमरसिंह मारे गये हैं और बादशाह ने उनकी लाश बुर्ज पर रखवा दी है। बेगा रानी ने मुझ नाचीज को इस गाढ़े वक्त में याद फर्माया है और यह पठान अब अपने को शाही फौज से बागी करार देता है। यह मेरी इज्जत का और इन्सानियत के

यह जुल्म बरदाश्त कर सकते हो ?

सब— नहीं कर सकते, नहीं कर सकते !

शाहपाल— तब चलो साह का जौहर दिखायें।

सब सिपाही— चलो शाहपाल, तुम्हारे दोस्त के लिये हमारा तन बदन हाजिर है।

[सब मिलकर गाते हैं]

हम तन-मन वारेंगे होंगे कुर्बान।
हम तन-मन वारेंगे होंगे कुर्बान॥
मुसाफिर हैं एक राह के दुनिया के सब इन्सान।
बन्दे खुदा सभी हैं हिन्दू और मुसलमान।
काबे में क्या धरा है जो मन्दिर में नहीं है।
मन्दिर में रमा नहीं है सो कहीं कुछ नहीं है।
यह एक ही अल्लाह का यहाँ है—वहाँ वो है।
उसके नाम पर निसार कर देंगे अपनी जान।

[सब का प्रस्थान]

चौथा दृश्य

[स्थान—नौलखा समय—अन्धकार, कमरे पर सशस्त्र राजपूत उपस्थित हैं। रामसिंह चौकी पर खड़े नंगी तलवार लिये खड़े हैं]

रामसिंह— (तलवार ऊँची करके उच्च स्वर से) राजा राठौर की जय ! भाइयो आज हमारी कठिन परीक्षा का दिन है। हम गिनती में थोड़े हैं, शत्रु असाधारण प्रबल है। हम

यह जुल्म बरदाश्त कर सकते हो ?

सब— नहीं कर सकते, नहीं कर सकते !

शाहजादा— तब चलो, लोहे का जौहर दिखावें।

सब सिपाही— चलो शाहजादे, तुम्हारे दोस्त के लिए हमारा तन बदन हाजिर है।

[सब मिलकर गाते हैं]

हम तन-मन वारेंगे होंगे कुर्बान।
हम तन-मन वारेंगे होंगे कुर्बान॥
मुसाफिर हैं इस राह के दुनिया के सब इन्सान।
बन्दे खुदा सभी हैं हिन्दू और मुसलमान।
काबे में क्या धरा है जो मन्दिर में नहीं है।
दिल में रमा नहीं है तो कहीं कुछ नहीं है।
यह एक ही अल्लाह जो यहाँ है—वहीं तो है।
उसके नाम पर निसार कर देंगे अपनी जान।

[सब का प्रस्थान]

चौथा दृश्य

[स्थान—आगरा। समय—प्रभात। फाटक पर सशस्त्र राजपूत उपस्थित हैं। रामसिंह घोड़े पर सवार नंगी तलवार लिए खड़े हैं]

रामसिंह— (तलवार ऊँची करके उच्च स्वर से) राजा राठौर की जय! वीरो! आज हमारी कठिन परीक्षा का दिन है। इस दिन। [illegible] है परन्तु [illegible] हमें

केवल युद्ध ही नहीं करना है दो अन्य काम करने
प्रथम तो महाराज की लाश बुर्ज पर से लानी
दूसरे काकीजी को सती कराना है। यदि हम
न कर सके तो हमारा क्षत्रियत्व धिक्कार के
हो जायगा। भाइयो कहो कौन प्राण देगा?

सब राजपूत—हम प्राण देंगे और प्राण लेंगे।

रामसिंह— भाइयो केवल प्राण देने और लेने से कुछ नहीं बने
हमें बड़ा कठिन और जोखिम का काम करना है

सब— (एक स्वर में) हम वह काम करके ही दम लेंगे।
[रानी का प्रवेश]

रानी— ठाकरो इसके लिए कोई बन्धन नहीं है। अब
कोई हमारा नौकर नहीं। मैं सबको नौकरी से
करती हूँ। जिनकी इच्छा हो पृथक हो जाय
युद्ध करना हो क्षत्रियत्व के नाम पर करे।

सब राजपूत जय महारानी की। आज हम मारा करेंगे।

एक राजपूत—वीरो आज आपकी तलवारों का पानी
जायगा। राजपूतनी बार-बार पुत्र को जन्म
करती। वीर पुरुषों को युद्ध में प्राण-त्यागना ही उ
अपने स्वामी
राठौर

रामसिंह

वंशज पीढ़ियों तक गायेंगे।

रानी— (आगे बढ़कर) ठाकुरों आपकी वीरता दुनिया में जाहिर है पर आज आपको उससे भी अधिक वीर बनना पड़ेगा। आज आपको वीरता की पराकाष्ठा करनी होगी क्योंकि आप कुल दो सौ हैं।

एक राजपूत—माता, आप चिन्ता न करें हम बीस हजार के बराबर हैं। हम तिल तिल कटकर भी महाराज का शरीर लाकर आपकी सेवा में हाजिर करेंगे।

रामसिंह— (तलवार ऊँची करके) सरदारो जब तक महाराज का शरीर मौमहले नहीं पहुँच जायगा तब तक न हम मरेंगे न हटेंगे।

सब— महाराज अमरसिंह की जय हम अमर हैं हम काल से भी नहीं डरते।

[एक सैनिक का प्रवेश]

सैनिक— (प्रणाम करके) मुजरा कुँवर साहिब। कुछ राजपूत श्रीमानों की सेवा में उपस्थित हुआ चाहते हैं।

रामसिंह— उन्हें आने दो। (राजपूतों का प्रवेश)

रामसिंह— भाइयो आप लोग कौन हैं और क्या चाहते हैं?

राजपूत— महाराज हम आगरे में रहने वाले शाही सिपाही हैं। हमें मालूम हुआ है वीरवर अमरसिंह काम आये हैं और सती माता का अपमान हो रहा है। महाराज,

दूसरा— यही तो उनका देवतापन है। वे हम जैसे थोड़े ही हैं कि रात दिन नोन-तेल-लकड़ी में सिर खपाते रहें।

पहला— चुप हम साधु-महात्मा ठहरे हमें नोन-तेल से क्या वास्ता ?

दूसरा— सच कहते हो महात्माजी मैंने संसारी जनों की बात कही थी।

[एक भक्त का प्रवेश]

भक्त— जयशंकर !

साधु— जयशंकर !

भक्त— (दण्डवत करके बैठकर) महाराज भगवन्! का कहाँ से पधारना हुआ ?

साधु— बाबा उत्तराखण्ड से चले आ रहे हैं। अमरनाथ महाराज के दर्शन करके आये हैं। अब सीधे विन्ध्याचल के पार जायेंगे।

भक्त— धन्य महाराज दर्शनों से पवित्र हो गया।

[दूसरे भक्त का प्रवेश]

पहला भक्त—भाई चचाजी महात्माओं के दर्शन करलो ! रमते राम हैं उत्तराखण्ड से आ रहे हैं।

भक्त— (दण्डवत् करके) जयशंकर की !

साधु— जयशंकर की। कौन कूप हो भाई ?

भक्त— महाराज मैं मोदी हूँ।

साधु— क्या यहीं के निवासी हो ?

भक्त— हाँ महाराज, यहीं पीढ़ियाँ गुज़र गईं ।

साधु— (दूसरे से) बच्चा तुम कौन हो ?

भक्त— महाराज मैं नाई हूँ । हजामत बनाता हूँ ।

साधु— तुम तो बड़े-बड़े रईसों के यहाँ जाते होगे ?

भक्त— हाँ महाराज, आपकी दया से बड़े-बड़े सरदार मुझसे हजामत बनवाते हैं ।

[तीन-चार भक्तों का प्रवेश]

सब भक्त—जयशंकर की !

साधु— जयशंकर की !

[सब बैठकर गप्पें उड़ाते हैं]

एक— अजी चिलम गरम करो, सन्तों को दम लगवाओ । लगे दम मिटे गम । (खाँसता है)

दूसरा— (पुलक्य निकालकर) यही हमेशा साथ रखते हैं (साधु से) महात्माजी चिलम है ?

साधु— बच्चा, आज कृष्णपक्षनारायण का व्रत है और गुरुजी मौन हैं । आज अन्न-जल गाँजा-भाँगी नहीं होगा ।

[सभी ध्यान से गुरु साधु को देखते हैं]

एक— साक्षात् शिव के अवतार हैं कैसा तेज है ?

दूसरा— आयु तो अधिक नहीं प्रतीत होती ।

तीसरा— महात्माओं की क्या, हज़ार वर्ष के हो जायँ तब भी बालक बने रहें । (साधु से) महाराज गुरुजी की आयु क्या है ?

साधु— शान्त रहो गुरुजी को करुणा उदय हुई है (उठकर गुरुजी के समीप जाकर) वे योगदृष्टि से सब देख रहे हैं। (कुछ संकेत करता है और लौटता है।)

साधु— गुरुजी ने आज्ञा दे दी।

सब— जय गुरु जयशंकर।

साधु— सुनो (जटा से तावीज निकाल कर) यह तावीज राज कुमारी के हाथ पहुँचाना होगा।

जयसिंह— मैं पहुँचाऊँगा।

साधु— शपथ लेनी होगी।

जयसिंह— मैं धर्म और परमेश्वर की शपथ लेता हूँ।

साधु— यदि तावीज पहर रात जाने से प्रथम ही कुमारी के हाथ में न पहुँचा, तो ले जाने वाले का नाश हो जायगा।

जयसिंह— यह सूर्य छिपते ही पहुँच जायगा।

साधु— (तावीज देकर) तुम कौन जाती हो?

जयसिंह— मैं तीवी हूँ

साधु— कहाँ रहते हो?

जयसिंह— मोहल्ले ही में।

साधु— तुम्हें एक काम और करना होगा, तावीज कुमारी को देकर यहाँ आना होगा।

जयसिंह— उसी समय।

साधु— उसी समय।

जयसिंह— (सोचकर) आऊँगा।

साधु— (नाई से) तुम्हारा क्या नाम है ?

नाई— महाराज, मुझे चन्दन कहते हैं।

साधु— साधु की सेवा करोगे ?

नाई— (हाथ जोड़ कर) अवश्य महाराज।

साधु— गुरु महाराज रात्रि को साधना करते हैं। तुम यहाँ उपस्थित रहो निहाल हो जाओगे।

नाई— (प्रसन्न होकर) जो आज्ञा महाराज !

साधु— अच्छा अब सब लोग जांय। गुरुजी की साधना में विघ्न पड़ता है। जयसिंह तुम पहर रात्रि जाने से प्रथम ही आना और चन्दन तुम भी।

दोनों— जो आज्ञा (सब जाते हैं)।

युवक तपस्वी—(आँख खोल कर) विजयसिंह, आज कठिन परीक्षा है, हम केवल आठ हैं।

साधु— चिन्ता नहीं कुमार, हम आठ हजार हैं। यह लोहा में फिर दुनिया देख।

युवक— हमें अपनी चिन्ता नहीं, परन्तु कुमारी की रक्षा करनी है।

साधु— सब की एकलिंग सहाय करेंगे। (सामने देखकर) वह देखिए जैतसिंह आ रहे हैं।

[साधु के वेश में जैतसिंह का प्रवेश]

जैतसिंह— (सीधा कुमार के पास जाकर) महाराज कुमार की जय

हाँ। सेवक शीशमहल से आ रहा है।

कुमार— वहाँ का क्या हाल है?

जैतसिंह— महाराज, शाहू की सेना बढ़ रही है।

कुमार— क्या रानी से भेंट हुई?

जैतसिंह— नहीं महाराज, वे रणचण्डी की भाँति युद्ध के प्रत्येक स्थान पर बिजली-सी चमकती दीख पड़ती हैं। राजकुमारी भी नंगी तलवार लिये परछाईं की भाँति उनके साथ हैं।

कुमार— विजय, चाहे जो हो, हमें अभी चलना होगा।

विजय— महाराज, रात्रि हो जाने पर चलना ठीक होगा।

कुमार— रात्रि तक यदि प्रलय हो गई?

विजय— हम चलकर यदि युद्ध न कर सके, तब सब कुछ नष्ट हो जायगा।

कुमार— (कटे पेड़ की भाँति) क्या हमारे भुजदण्ड इतने निर्बल हैं?

विजय— (हाथ जोड़कर) पृथ्वीनाथ, मनुष्य का बल बुद्धि है। (जैतसिंह से) क्या शीशमहल में कोई गुप्त मार्ग नहीं है?

जैतसिंह— रामसिंह जी के पलंग पर पहुँच रहे हैं। यहाँ मार्ग के लिये सुराख हो रहा है।

कुमार— यहाँ कौन गया है?

बेनसिंह— प्रसन्नता यहाँ जीवनसिंह आये हैं (सामने देखकर) वे आ रहे हैं।

[भागुवन में जीवन का प्रवेश]

जीवनसिंह—(पांवों में आंसू भर कर) महाराज कुमार हमारा यहाँ निरुपाय बैठे रहना लज्जा व योग्य है। वे मुट्ठीभर राजपूत शासक रामसिंह की अधीनता में प्राणों पर खेल रहे हैं। वे दुर्ग से खास खान पर तुल हैं। व क्रमपूर्वक अगम्य और अथाह शाही फौज को चीरते हुए भीतर धंस धस जा रहे हैं।

कुँवर— चीरो इस छद्मवेश को त्यागो। चलो समय रहते युद्ध कर गुजरें।

विजय— महाराजकुमार हम केवल राजकुमारी की रक्षा कर सकते हैं। हमें सूर्य छिपने तक ठहरना पड़ेगा। (कुछ सोचकर) एक युक्ति है।

[धीरे-धीरे परामर्श करते हैं। उनकी गर्दनें हिलती हैं। विजयसिंह कुमार उठकर चल देते हैं।]

छठा दृश्य

[स्थान—आगरे का किला अमर-दरवाजा जिस के फाटक पर रामसिंह अनिकों सहित नंगी तलवार लिये खड़े हैं। बुर्जियों पर तोप चढ़ी है। दर्वाजा बन्द है। अमरसिंह की सेना जमीनों पर ओर क्रमश बढ़े लिये खड़ी है]

रामसिंह— मैं कहता हूँ दरवाजा खोल दो और मुझे महाराज

अमरसिंह का शरीर स आन दो ।

मुगल सरदार—बादशाह सलामत का हुक्म नहीं है ।

रामसिंह— मुझे इसकी परवाह नहीं । मैं फाटक तोड़ दूँगा और जबरदस्ती अपनी इच्छा पूर्ण करूँगा ।

मुगल सरदार—अगर तुम तुरन्त यहाँ से न हटे आगरा तो मैं अभी तोपों पर बत्ती रखने का हुक्म दूँगा । तुम बन्नसीब मगरूर काफिर, गेहूँ के साथ घुन की तरह पिस मरोगे ।

रामसिंह—(तलवार से) वीरो बोलो जय सती की ।

सब राजपूत—(तलवार मूंठ कर) जय सती माता की ।

रामसिंह— फाटक को जला दो और भालों पर आदमी सवार होकर बुर्ज पर चढ़ जाओ ।

[सब दम सवार राजपूत हमला शोर देते हैं । सब फाटक म आग लगाते हैं]

मुगल सरदार—बहादुरो देखते क्या हो तोपों पर बत्ती दाग दो और तीरों की बारिश शुरू कर दो ।

[समाप्त मयूस दम टूट पड़ता है । बन्दीरे युद्ध का समां बंध जाता है । राजपूत किले पर चढ़ने का उद्योग करते हैं । फाटक धांय धांय जलने लगता है]

रामसिंह— शाबास वीरो मार आओ यह अमर मारा है । राठौर की तलवार का जौहर माना मनुष्यों का तमा दिखाया

ठि याद रहे। मारे जाओ ! वीरो मारे जाओ। वाह जालिमसिंह क्या कहना है तुम्हारे वीर सपूत हैं। जयसिंह ठाकुर तुम्हारे सामने लोथों का पहाड़ लग गया है। तुम्हारी माता धन्य है। मारे जाओ वीरो यह पल फिर बार-बार न मिलेगा। भारत की इस गुलाम दशा में तुम्हारी वीरता की अमर छाप रह जायेगी। मारो न कुछ रहेगा न हम केवल हमारा नाम रह जायेगा।

[चारों ओर से तलवार घुमाता है]

जयसिंह— (बड़ी कठिनता) फिर कहो राजपूतों यहाँ हमारे स्वामी की लाश खींच-खींचे ला रहे हैं। जय महाराज अमर सिंह की ! [लड़ता हुआ घायल हो गिर पड़ता है। घायल हुआ जाता है। सब लोग किले के भीतर घुस जाते हैं। पीछे से बल्लूजी सेना सहित रेल-पेल मचाते हैं।]

बल्लूजी— धन्य महाराज रामसिंहजी आपका सा सुवर्ण अवसर हो। चिन्ता न कीजिये। बल्लू अब आ गया है अब आप कुछ न करें। मैं अभी स्वामी की लाश लाता हूँ। [लड़ता बाढ़ की भाँति घुसता चला जाता है। बीच बल्लूजी की तलवार से घबराकर अन्य सब दूर हट जाता है।]

रामसिंह— (हाथ बढ़ाते हुए) शाबाश बहादुर। मैंने तो समझा था आज हम सदा को सुला दिया।

बल्लूजी—(रामसिंह जी के लिए रास्ता करते हुए) महाराज, मैं आपके घराने का चाकर हूँ। स्वर्गीय महाराज ने मेरा अपमान किया था। अब महाराज ही अपमान न सहकर जूझ मरे तो महाराज का यह सेवक कैसे अपमान सहता। (तलवार घुमाता है) बढ़िए महाराज, बढ़ो भाइयो वह सामने महाराज का शरीर है।

रामसिंह—(सामने के दृश्य को देखते हुए) चाचाजी क्या मैं सुन सकता हूँ कि काकाजी ने आपका क्या अपमान किया था?

बल्लूजी— महाराज उन्हें मेरे पालन का बड़ा शौक था। सरदारों को वे मेरे घराने भेजा करते थे। एक दिन मुझे भी हुक्म दिया। भला मैं मेरे पगला क्या जानूँ? मैं वह सेवा न कर सका। महाराज ने मेरी आजीविका छीन ली और मुझे मुगलों की नौकरी करनी पड़ी।

[एक नई मुगल सेना आ जाती है]

बल्लूजी— (दोनों से काम लेते दोनों हाथों से तलवार घुमाते हुए) महाराज आप ठीक मेरे पीछे बढ़े चले आइए। अब कर युद्ध करने का समय यह नहीं है। हमें उस बुर्जी तक पहुँचना है। (बढ़ता है)

रामसिंह— (पीछे चलकर) चाचाजी काकाजी के इस काम के लिए मैं आपसे क्षमा माँगता हूँ।

[एक मुगल को काट फेंकता है]

बल्लूजी— महाराज, उनके स्थान पर अब आप हमारे राजा हैं और मैं आपका सेवक। यह आप क्या चाहते हैं! सावधान! (बहुत सी मुगल सेना दोनों वीरों पर टूट पड़ती है। बहुत शोर मचता है। भयानक युद्ध होता है।)

एक मुगल सेनापति—यही दोनों बागी सरदार हैं। इन्हें जिन्दा गिरफ्तार करो नहीं तो मार डालो।

बल्लूजी— (हँसकर) जिन्दा ही गिरफ्तार करो। लो (उछल कर सेनापति का सिर काट लेता है। मुगल सेना में भगदड़ मच जाती है।)

रामसिंह— (माथे का रक्त पोंछकर) चाचाजी अब हम स्वर्ग जाना सोचना चाहिए।

बल्लूजी— बढ़े चलो बढ़ चलो! (सब राजपूत आगे जोर देते हैं। बड़ा शोर मचता है।

बल्लूजी— क्या अधिक घाव लगा?

रामसिंह— अभी कुछ नहीं वह सामने बुर्ज है।

बल्लूजी— (जोर से) आगे यह बुर्ज है उस पर कब्जा कर लो।

सब राजपूत—महाराज की जय राठौरों की जय।

[बुर्ज की ओर जाते हैं]

रामसिंह— आओ मेरा क्या हुआ आदमी पर आदमी चढ़ आया। (बाड़ से ऊपर चढ़, उछल कर बुर्ज पर चढ़ जाते हैं। सब राजपूत एक एक कर बुर्जी पर पहुँच जाते

है। मुगल सेना तीरों की वर्षा करती है।)

बल्लू जी—(चिल्ला कर) जय महाराज रणबंका अमरसिंह की। यह मैं बल्लूजी आज बादशाही हुक्म पर लात मार कर अपने स्वामी को ले आ रहा हूँ जिसको माँ ने दोना गाया है रानें।(लाश को उठा कर पगड़ी से खूब कसकर पीठ से बाँध लेता है। मुगल सेना बुर्ज पर टूट पड़ती है। घमासान युद्ध मच जाता है। लोथों का ढेर लग जाता है।)

बल्लू जी—(दाएँ बाएँ तलवार चलाता हुआ) महाराज आगे बढ़ कर रास्ता कीजिए।

रामसिंह—चलिए चाचाजी (आगे बढ़कर तलवार के बल से शत्रु को चीर कर रास्ता बनाता है।)

सब राजपूत (महाराज की लाश को देखकर) महाराज की जय हो, राठौड़ की जय हो (जोश में आकर एकदम मार काट मचा देते हैं। मुगल सेना के पाँव उखड़ जाते हैं।)

रामसिंह—बढ़े चलिए चाचाजी अभी फाटक दूर है। देखिये वह फाटक पर सेना आ रही है।

बल्लू जी—(जोश पर सवार होकर) कुछ चिन्ता नहीं। आप रास्ता काटते हुए आगे बढ़ जाइए।

[सब लोग आगे बढ़ते हैं]

[मुगल सेना उन्हें चारों ओर से घेर लेती है]

रामसिंह—(दूसरी तलवार चलाते हुए) चाचाजी फाटक पार करना बड़ा कठिन है।

बल्लूजी— (जोर से) बढ़े चलो राजपूतो आज तुम्हारी माता के दूध की परीक्षा होगी। (सब लोग चिल्लाते हैं—जय राठौर वीर की! जय काली माता की!!)

(फाटक पर भयानक मारकाट मचती है)

बल्लूजी— (अत्यन्त घावों से शिथिल होकर) महाराज! सावधान होकर युद्ध कीजिए! आह मेरे भुजदण्ड शिथिल हो रहे हैं। सावधान!

(चारों ओर से तलवार चलती है। मुगल दल उन्हें घेरलेता है। घमासान भीड़ में ... मुगल सेना को चीरते हुए बल्लूजी के सामने आ पहुँचता है।)

बल्लूजी— सावधान जो कोई आगे बढ़ेगा दो टुकड़े कर दूँगा। रास्ता छोड़ दो अपने प्राण न खो।

[भीड़ से सलावत शाहबाजखाँ का प्रवेश]

शाहबाजखाँ—(तलवार घुमाकर) पुत्र रामसिंह और सरदार बल्लूजी मैं शाहबाजखाँ पठान महाराज का दोस्त और खादिम हूँ। मेरे साथ पाँच सौ बहादुर पठान हैं जो डरना नहीं जानते। घबड़ाना नहीं सीधे बढ़े चलो।

बल्लूजी— अब पठान और मुगल मिलकर ही काम करेंगे।

मुगल सेना नायक—तुम दोगले हो! मुसलमान होकर काफिर की तरफ से लड़ते हो?

शाहबाजखाँ—तुम कमीने हो जो इन्सान को इन्सान से नहीं मिलने देते। दूर भागो। (इतने में हाथ में नंगा

सिर झुका देता है)

बल्लूजी— (घावों से शिथिल होकर) महाराज रामसिंह !

रामसिंह— (चौंककर) चाचाजी क्या हुक्म है ?

बल्लूजी— शहबाज़खाँ पठान और इधर आओ।

शहबाज़खाँ–(निकट आकर) क्या हुक्म है सरदार ?

बल्लूजी— यह लाश श्री सरकार सिवा महारानी के दूसरा छूने न पावे। तुम्हें रुक कर युद्ध करने की आवश्यकता नहीं सीधे नौमहल की राह लो। मैं शाही फौज का रास्ता रोकता हूँ। निर्भय जाओ। रास्ते में भय नहीं है।

शहबाज़खाँ–बहुत अच्छा सरदार (लाश को अपनी पीठ पर कस कर बाँधता है)

बल्लूजी— महाराज !

रामसिंह— चाचाजी !

बल्लूजी— आप चिरंजीव रहें मैं कर्तव्य पूरा कर चुका। महारानी से कहना कि वे मुझे क्षमा करें। शहबाज़खाँ को पीठ पर रखिए। ज्योंहि लाश किला पर पहुँच जाय तोप लगवा देना। काम सिद्ध हो गया। जाइए मैं मुगल सेना को रोकता हूँ। आप पधारिए।

रामसिंह— जुहार चाचाजी।

बल्लूजी— (आँखों में आँसू भरकर) जाओ मेरे महाराज तुम चिरंजीवी रहो।

[रामसिंह का शाही सेना सहित प्रस्थान। बल्लूजी का फाटक पर डट कर युद्ध करना]

सातवाँ दृश्य

[स्थान—सीसमहल। समय—रात्रि घनघोर युद्ध। सीसमहल को मुगल सेना ने घेर रखा है। रानी नंगी तलवार लिए सर्वत्र बिजली की भाँति घूम रही है। तारा एक झरोखे से तीर-वर्षा कर रही है]

रानी— (तारा से) धन्य सखी तेरे बाण तो यम के सन्देश हैं।

तारा— माँ आप इस ओर की चिन्ता न करें आप वाम पार्श्व की रक्षा करें। यहाँ अकेली मालती सैनिकों पर तेग उलीच रही है। उधर का साहस बढ़ रहा है।

रानी— चिन्ता नहीं पुत्री मैंने वहाँ कुछ सैनिक भेज दिए हैं।

[नंगी तलवार लिए बल्लूजी की स्त्री का प्रवेश]

रानी— (साश्चर्य मुद्रा से) आप कौन हैं देवी?

वह स्त्री— एक राजपूत स्त्री जो आपके लिए प्राण देना चाहती है।

[तलवार रानी के चरणों पर रख देती है]

रानी— धन्य वीरांगना, परन्तु मैं बिना परिचय पाये आपकी सेवा नहीं स्वीकार कर सकती।

वह स्त्री— मैं आपके पुराने चाकर बल्लूजी की पत्नी हूँ।

रानी— शम्भूजी ने मेरी प्रार्थना अस्वीकार कर दी थी, क्यों ?

भट— महारानी ! वे किले में शहरी मार-मार रहे हैं। वे कुछ ही घड़ी में महाराज का शरीर यहाँ लेकर आ रहे हैं।

रानी— (तलवार म्यानों से [illegible] और उसे देखकर) मैंने कुछ और ही सुना था। मैं अपने विचारों को धिक्कारती हूँ। आओ अग्नि हम राजपूतनी का कठिन कर्तव्य पूरा करें।

भट— महारानी मुझे अन्त तक [illegible] की रक्षा का भार सौंपा जाये।

रानी— (आँसू भर कर) [illegible] आपकी पुत्री है। आप यहीं ठहरें।

[एक राजपूत का प्रवेश]

राजपूत— महारानी की जय हो ठाकुर विक्रमसिंह काम आए सिंहद्वार की अब कौन रक्षा करेगा ?

रानी— (एक सैनिक से) शार्दूलसिंह आप सिंहद्वार की रक्षा कीजिए।

शार्दूलसिंह—(मुजरा करके) जो आज्ञा महारानी ! [प्रस्थान]

[नेपथ्य में भारी कोलाहल। नारियों का रुदन। दूसरे राजपूत का प्रवेश]

राजपूत— महारानी की जय हो। असंख्य मुसलमान और आ रहे हैं।

दूसरा— वे [illegible] रहे हैं।

सीमरा— उनके साथ हज़ारों मशालें हैं। वे इस महल को फूँककर राख कर देंगे।

[एक राजपूत का प्रवेश]

राजपूत— महारानी, पूर्वी द्वार भंग हो गया। शत्रुदल वेग से भीतर घुसा चला आ रहा है।

रानी— (दर्प से) ऐसा कभी न होने पायेगा, राजसिंह!

राजसिंह— जय माता की।

रानी— आप पूर्वी द्वार का मोर्चा लें।

राजसिंह— जो आज्ञा। [प्रस्थान]

[अचानक कोलाहल बढ़ रहा है। एक तीर रानी की भुजा में आकर लगता है]

नाहरसिंह—माता, आप भुजा पर भीतर रहें।

रानी— (तीर को खींच निकाल कर) कुछ परवाह नहीं। ठाकुर! आप पश्चिम द्वार पर सहायता करें।

नाहरसिंह—जो आज्ञा।

[राजपूत का प्रस्थान]

[एक ओर से अचानक बहुत से पठान सैनिकों के साथ सादुल्लाखाँ का प्रवेश]

रानी— खबरदार रहो! एक कदम भी आगे न बढ़े।

[तलवार लेकर तेज़ी से आगे बढ़ती है]

सादुल्लाखाँ—(तलवार फेंक कर, घुटने टेक कर) जय महारानी की। मैं सादुल्लाखाँ पठान हूँ। आपका चाकर और महाराज

रानी— बल्लूजी ने मेरी प्रार्थना अस्वीकार कर दी थी क्यों?

दूत— महारानी वे शिर में गहरी मार-मार रहे हैं। वे कुछ ही घड़ी में महाराज का शरीर यहाँ लेकर आ रहे हैं।

रानी— (तलवार आँखों से लगा और उसे देखकर) मैंने कुछ और ही सुना था। मैं अपने विचारों को धिक्कारती हूँ। आओ सहेलि हम राजपूतनी का कठिन कर्तव्य पूरा करें।

दूत— महारानी मुझे अब तक मारा की रक्षा का भार सौंपा जाय।

रानी— (मुस्कुरा कर) भार आपकी पूंजी है। आप यहीं ठहरें।

[एक राजपूत का प्रवेश]

राजपूत— महारानी की जय हो ठाकुर विक्रमसिंह काम आए। सिरदार की अब कौन रक्षा करेगा?

रानी— (एक सैनिक से) भानुसिंह आप सिरदार की रक्षा कीजिए।

भानुसिंह—(मुजरा करके) जो आज्ञा महारानी! [प्रस्थान]

[नैपथ्य में भारी कोलाहल। तोपों का स्वर। एक राजपूत का प्रवेश]

राजपूत— महारानी की जय हो। असंख्य मुसलमान और आ रहे हैं।

दूसरा— वे गोलियाँ बरसा रहे हैं।

तीसरा— उनके साथ हजारों मशालें हैं। वे इस महल को फूंककर खाक कर देंगे।

[एक राजपूत का प्रवेश]

राजपूत— महारानी, पूर्वी द्वार भंग हो गया। शत्रुदल वेग से भीतर घुसा चला आ रहा है।

रानी— (दर्प से) ऐसा कभी न होने पावेगा, रामसिंह!

रामसिंह— जय माता की।

रानी— आप पूर्वी द्वार पर मोर्चा लें।

रामसिंह— जो आज्ञा। [प्रस्थान]

[भयानक कोलाहल बढ़ रहा है। एक तीर रानी की भुजा में आकर लगता है]

ठाकुरसिंह—माता, आप कृपा कर भीतर रहें।

रानी— (तीर को खींच निकाल कर) कुछ परवाह नहीं। ठाकुर! आप पश्चिम द्वार पर सहायता करें।

ठाकुरसिंह—जो आज्ञा।

[राजपूत का प्रस्थान]

[एक ओर से अकस्मात बहुत से पठान सैनिकों के साथ शाहबाजखाँ का प्रवेश]

रानी— खबरदार रहो! एक कदम भी आगे न बढ़ा।

[तलवार लेकर वीरों के आगे बढ़ती है]

शाहबाजखाँ—(तलवार फेंक कर, घुटने टेक कर) जय महारानी की। मैं शाहबाजखाँ पठान हूँ। बादशाह साहब और महाराज

का दोस्त । मैं अपने रामसिंह महाराज की लाश ले आया हूँ । अब मुझे क्या हुक्म है । दुर्ग दरवाजे पर मेरे बेटे नसीरखान का कब्जा है ।

रानी— धन्य पठान वीर मुझे इस विपत्ति में साथ छोड़कर आप से बोलना पड़ा है । परन्तु

[रामसिंह का रक्त में लथपथ प्रवेश]

रामसिंह— माता हम महाराज को ले आए हैं । (रोता है)

रानी— (तलवार पकड़कर) बेटे अब युद्ध से मुझे छुट्टी मिलनी चाहिये । मेरी सब तैयारियाँ करा दो ।

रामसिंह— जैसी माता की आज्ञा ।

कस्तूरी की रानी—पुत्र मेरे स्वामी ने कैसा युद्ध किया ?

रामसिंह— रानाजी ये ही महाराज का शरीर लाए हैं । उनका शरीर रणो गती छिन गया है परन्तु उनका प्रण है कि जब तक चिता में आग लगाकर राख न छूटेगी वे प्राण न त्यागेंगे ।

रानी— (आनन्द विभोर होकर) मैं धन्य हुई ।

[आँसू गिराती है]

सरदारखाँ—महारानी अब मुझे भी लड़ाई से छुट्टी चाहिये मैं अपने बेहरखान दोस्त के पास जाता हूँ ।

[गिर कर मर जाता है]

रानी— धन्य वीर! रामसिंह पुत्र! अभी बारह गाँवों का पट्टा महावतखाँ पठान और उसकी आल औलाद को बख्श दो।

रामसिंह— जो आज्ञा काकीजी!

[एक राजपूत का प्रवेश]

राजपूत— महाराज के महल में आग लगाने की चेष्टा कर रहे हैं।

रामसिंह— माता आपकी सब सामग्री प्रस्तुत है।

रानी— मालती!

[मालती का रोते रोते प्रवेश]

रानी— मालती, सब प्रस्तुत है न?

मालती— हाँ माता!

रानी— पुत्र महाराज का शव कहाँ है? उसे यहीं मँगाओ।

रामसिंह— (आँसू भर कर) जो आज्ञा काकीजी!

[रामसिंह के संकेत से कुछ सैनिक अमरसिंह का शरीर ले आते हैं।]

रानी— (शव को देखकर) आओ स्वामिन्! बस तब तुम कैसे ये आज कैसे हो गये। क्या वीरों की यही भाग्यरेखा है? (गोद में लेकर सिर को वक्षस्थल पर रख कर दासियों से रामायण मँगवा कर ध्यान लगाती है। सब पन्ना पर ध्यान करती है)

[पर्दे पर सखियाँ भक्ति गान हैं]

जय जय राजपूत कुल भानु ।
जिनके प्रबल प्रताप महीतल भारी ।
जिनके भुजबल कम्पित अरि चमू हारी ।
जिनके चरण धमक से धरिणी भारी ।
वे रणधीर सिंह यों अमर हुए असिधारी ।

[कोलाहल बढ़ रहा है]

[एक राजपूत का प्रवेश]

राजपूत— जय महारानी ! शत्रु-सेना ने सिंहद्वार भङ्ग किया । शत्रु भीतर घुस रहे हैं ।

रानी— द्वारों अब कोई समाचार मुझे न पहुँचाओ । अ रहने महल की रक्षा करो । इस समय मेरी ध्या भङ्ग न करो । (दासियों से) दासियो मेरा शृङ्गा लाओ सिन्दूर लाओ लाल चूनरी लाओ, मा लाओ हाथी-दाँत का चूड़ा लाओ । आज मैं शृङ्गार करूँगी । (दासियाँ रोती रोती सब सामग्री लाती हैं । र शृङ्गार करती हैं ।)

तारा— (चरण-शरण पकड़ कर) माँ मैं भी आग के साथ चलूँगी । मुझे त्यागिये नहीं ।

रानी— (प्यार करकर) नहीं बेटी तू बच्ची अपने मायके वे मिलकर आयेंगे क्या पुण्य द्वार खुला है ?

एक दासी—जी हाँ महारानी यहाँ चार दासियाँ मशाली तमा लिए पहरा दे रही हैं ।

[नेपथ्य में 'मारो-मारो' का शोर]

रानी— पुत्र ! शत्रु महल में घुस आये हैं। मालती ! तुम सब स्त्रियों को लेकर शयनागार में एकत्र हो जाओ और मशाल तैयार रखो। कदाचित् यह कठिन व्यवस्था करना ही पड़े। (शोर निकट आता है)

रामसिंह— (तलवार निकाल कर) माताजी, शत्रु सिर पर आ पहुँचे।

[बहुत-सी तलवारों की झनझनाहट]

रानी— ठहरो पुत्र अभी क्षणभर तुम युद्ध से विरत रहो मेरे साथ आओ।

तारा— (हठ करके) मैं भी चलूँगी माता !

[नेपथ्य में 'मारो मारो मारो'। कुछ मुगल सैनिक कक्ष में घुस आते हैं। रामसिंह तलवार लेकर झपटता है रानी तलवार ले लेती है। तारा धनुष उठाकर शरसन्धान करती है। घमासान युद्ध होता है।]

एक मुगल सैनिक—यही अमरसिंह की लड़की है इसे जिन्दा पकड़ लो।

रामसिंह— ठहर पतित सिंहनी को छीनना नहीं है आसान।

[तारा का छोड़ा बाण उस मुगल के हृदय को पार कर जाता है। वह चिल्लाकर गिरता है।]

[अनेक मुगल-सैनिक तारा पर आक्रमण करते हैं।]

रानी— (तारा के पास आकर) पापियो, एक कदम बढ़ाया

और भाग गया ।

यवन सैनिक—पकड़ लो दोनों को स बलो !

[शाहजादा दारा का नंगी तलवार लिए प्रवेश]

दारा— सिपाहियो ठहरो ! (रानी से) लड़ाई फिजूल है। आपके सब सिपाही मारे गए। तारा को मेरे हवाले कीजिए। मैं वादा करता हूँ कि उसे हिन्दुस्तान की मलका बनाऊँगा। आप खुशी से सती हूजिये। मैं लड़ाई बन्द करने का हुक्म देता हूँ।

रानी— (दो कदम आगे बढ़कर) तुम बादशाह के बेटे हो इतनी बड़ी सल्तनत के होनहार बादशाह हो और एक मुसीबतज़दा असहाय औरत के सामने तुम्हें ऐसा अधम प्रस्ताव करते शर्म नहीं आती ! मैं तुम्हें शाप देती हूँ कि तुम कभी बादशाह न होगे। तुम्हारा नाश हो जायगा।

तारा— (आगे बढ़कर) ठहरो माँ इस पतित शाहजादे को शाप देने की आवश्यकता नहीं (तलवार निकाल कर) तलवार ला और देखा कि राजपूत कन्या पर कुदृष्टि डालने का कैसा भयानक परिणाम होता है।

दारा— (पीछे हटकर) एक औरत से लड़ना मेरा काम नहीं। सिपाहियो गिरफ्तार कर लो !

[कुँवर अमरसिंह का साथियों समेत तलवारें लिये हुए प्रवेश]

अमरसिंह— खबरदार शाहजादा ! शायद तुम औरतों से नहीं लड़ना

मगर मर्दों से तो लड़ने में हर्ज नहीं ? आ तलवार निकालो ।

दारा— तुम कौन हो ?

रामसिंह— मैं चित्तौड़ का राजकुमार रामसिंह हूँ, तलवार निकालो !

रानी— राजकुमार की जय ! सीसोदिया वंश की जय !!

रामसिंह— (चरण छूकर) महारानी इससे प्रथम आज्ञा मेरे लिए असम्भव था । (दारा से) शाहज़ादा क्या सोच रहे हो ? तलवार निकालो ।

दारा— तुम से मेरी कोई लड़ाई नहीं ।

रामसिंह— (लात मारकर) तलवार निकाल, अपराधी ! पतित ! पर-स्त्रियों पर कुदृष्टि डालने वाले !

दारा— (तलवार मूँठ पर) सिपाहियो, एक साथ हमला करो ।

[चार मुग़ल सिपाही एकदम हमला करते हैं]

रानी— ठहरो कुँवर ! पुत्र रामसिंह, शत्रुओं को तुम रोको । कुँवर तुम इधर आओ ।

[रामसिंह नंगी तलवार लिये रानी के पास आकर खड़े होते हैं । दो राजपूत उनके अगल बगल खड़े होते हैं चारों तरफ तलवारें चल रही हैं]

रानी— (नाथ से) बढ़ो, इधर आओ !

[नाथ आकर बीच सिर लिए खड़ी होतीं हैं]

रानी— (दोनों का गठ-जोड़ा बाँधकर) भगवान, तुम्हें सुखी रखें। आज से तुम पति-पत्नि हो। कुमार अब तुम्हें दो काम करने हैं। एक मुझे सती कराओ दूसरे तारा को सुरक्षित ले जाओ। नौ-महल का समस्त खजाना मैंने तुम्हारे दहेज में दिया।

राजसिंह— जो आज्ञा माता अब मुझे आज्ञा दो! रामसिंह अकेले लड़ रहे हैं।

रानी— जाओ वीर! पर द्वार की तब तक रक्षा करना, जब तक अग्नि शान्त न हो जाय।

राजसिंह— आप निर्भय रहें।

[सिंह की भाँति शत्रुदल पर टूट पड़ते हैं। घनघोर युद्ध होता है। रानी भीतर कक्ष में चली जाती है। तारा मूर्छित होकर गिर पड़ती है। एक दासी सम्भालती है। बड़े ज़ोर का धमाका होकर महल का एक पार्श्व उड़ जाता है।]

राजसिंह— (तारा के पास तलवार रखकर) अब क्या इरादा है?

तारा— जान बचाना कुँवर!

राजसिंह— अभी बाकी सेना को नौ-महल में कूच करने का हुक्म दो।

तारा— (रुख देखकर) फौज आ रही है! मदद पहुँच गई। बच जाएँगे।

राजसिंह— यहाँ बादशाही सिपाही नहीं, नौमहल के पानी पगड़ाव

सहित यहाँ सलामत आगरे की सरहद को पार कर सकें।

दारा— लिख देता हूँ। (लिखता है)

राजसिंह— शाहजादा आपके वालिद ने एक बार मेरे पिता की शरण ली थी। आपको मालूम है।

दारा— मालूम है कुँवर! मैं आपकी दोस्ती चाहता हूँ। दिल का दाग साफ कीजिए।

राजसिंह— (नारी की ओर संकेत करके) इस देवी से क्षमा माँगिए।

दारा— (सिर झुकाकर) बहिन मुझे माफ करो!

[नारी कुछ न कहकर नीची नजर कर लेती है]

दारा— कुँवर, खुदा ने चाहा तो हमारी-तुम्हारी दोस्ती ताजिन्दगी रहेगी।

राजसिंह— यह दोनों राज्यों के लिए आनन्द की बात होगी। अब आप जा सकते हैं।

[दारा का प्रस्थान]

[राजसिंह नारी को उठाकर हृदय से लगा लेता है।]

—

परिशिष्ट

कठिन शब्दों के अर्थ

अन्नदाता—अन्न देने वाला। यह वह शब्द है जिसे राजपूताने में राजाओं और श्रीमानों को सादर संबोधन करने में प्रयोग करते हैं।

अमीन— एक शाही अधिकारी जो जमीन के झगड़े तय करता है।

अमीर— असली ओहदेदार शाही।

आरोगना—भोजन करना।

कबीला— खानदान।

कौमा— मातम।

कोर्निश— शाही सलाम जिसमें सलाम करने वाले को जमीन तक सिर झुकाकर दोनों हाथ मस्तक पर लगाने पड़ते हैं।

रसूख— महिमा।

ख्वाजासरा—ये लोग शाही महलात के भीतर रहते थे या या तो स्वाभाविक रीति से हिजड़े होते थे, या बना लिए जाते थे। इन्हें महलों में बड़ी भी मान शान का जोर-शोर न था।

चण्डूबाज—चण्डू एक नशा होता है। जो अफीम से बनाया जाता है, तथा हुक्के की भाँति एक नली से खींचा लिया जाता है। जो लोग इस नशे के शौकीन होते हैं चण्डूबाज कहाते हैं।

कठिन शब्दों के अर्थ

अन्नदाता—अन्न देने वाला। यह वह शब्द है जिसे राजपूताने में राजाओं और श्रीमानों को आदर सम्बोधन करने में प्रयोग करते हैं।

अमीन— एक शाही अधिकारी जो जमीन के झगड़े तय करता है।

असील— असली जौहरदार लोहा।

आरोगना—भोजन करना।

उगौला— उगालदान।

ओगा— भोजन।

कोर्निश— शाही सलाम जिसमें सलाम करने वाले को जमीन तक सिर झुकाकर दोनों हाथ मस्तक पर लगाने पड़ते हैं।

खातून— महिला।

ख्वाजासरा—ये लोग शाही हरमों के नौकर होते थे जो या तो स्वाभाविक रीति से हिजड़े होते थे या बना लिए जाते थे। इन्हें महलों में कहीं भी आने जाने की रोक-टोक न थी।

चण्डूबाज—चण्डू एक नशा होता है। जो अफीम से बनाया जाता है तथा हुक्के की भांति एक नली के द्वारा पिया जाता है। जो लोग इस नशे के शौकीन होते हैं चण्डूबाज कहाते हैं।

चाकर— राजपूताने में सरदारगण अपने को राजा का चाकर कहा करते थे जो शिष्टाचार का द्योतक है।

चारण— राजपूताने की एक जाति जो वीररस की कविता करते और पूर्वजों की विरद गा-गाकर राजाओं को उत्साहित करते थे। राजा लोग इनका बड़ा आदर करते थे। राजा उन्हें 'बाबाजी' कहकर पुकारते थे।

जिल्लेइलाही सलामत कर्दे मुजरा अदब से—यह शब्द उस समय नकीब पुकारा करते थे जब बादशाह सलामत कहीं जाते थे। इसका अर्थ यह है।—परमेश्वर के प्रतिनिधि आ रहे हैं। अदब से मुजरा करो।

तुर्क— तुर्क एक जाति है जो मुसलमानों की है परन्तु मुसलमान के सर्वसाधारण हिन्दू-मुसलमान मात्र के लिए तुर्क या तुरकड़ा-शब्द क्रोध और अपमान की भावना से इस्तेमाल करते थे।

दर्गाह— बादशाह के सामने।

दारू आरोगिया—शराब पीजिए। राजपूताने में खाने-पीने को सम्मानसूचक ढंग पर 'आरोगना' शब्द कर उच्चारण करते हैं।

पगड़ी-बदल भाई—यह मुसल और राजपूतों दोनों जातियों पुरानी रीति चला आई है कि जब दो मर पगड़ी बदल लेते हैं तो वे जन

भाई-चारे का निर्वाह करते हैं।

पनाहे-आलम—बादशाह का सम्बोधन, संसार को शरण देने वाले।

पीनक— अफीम या चंडू के नशे में आदमी झूमता है तो उसे पीनक लेना कहते हैं।

बाइजी राज—बहिन के लिए यह प्रतिष्ठा का उच्चारण है।

बेगम रसीलुद्दीन—रसीलुद्दीन एक शाही दर्बारी उमराव थे जिनकी बाबत इतिहासकार मनुची ने लिखा है कि उनकी बेगम पर बादशाह की खास कृपा थी।

मतीरा— एक प्रकार का तरबूज, जो बीकानेर की रेतीली भूमि पर होता है। यह बहुत बड़ा होता है। कच्चे का शाक बनाकर खाते हैं। पक्के का पानी पीते हैं। पानी अत्यन्त मीठा और स्वादिष्ट होता है।

मसनद— एक बड़ा भारी तकिया जिसके सहारे बड़े लोग बैठना प्रतिष्ठा की बात समझते हैं।

मगो रब्बा अन्नदाता—हे अन्न देने वाले आप अत्यन्त क्षमा शील हैं।

मुजरा— राजपूत जब अपने स्वामी से मिलते हैं तब प्रणाम के स्थान पर मुजरा शब्द प्रयोग करते हैं।

मीना बाजार—मुगल बादशाह हर साल मेलों में एक बाजार लगाते थे जिसमें ... पर भी बन्द-सी बहु-बेटियाँ

भूमती और धरती म गिरती है। हे प्यारे गिरधर ! प्रसंग न होना तुमस मैं करोड़ों बार हा-हा खाती हूँ।

शरद्‌ऋतु की चाँदनी है तालाब में कमल खिले हैं। कहीं म सुन्दर नील कमल फूल हैं। ये सब बिना प्रियतम के स्वर की सपन के समान हो रहे हैं।

राधा कोठे पर बैठी है और किवाड़े खोलकर झाँक रही है। ऐसा मालूम होता है मानो काम रूपी गढ़ स दोनाली बन्दूक छूटी हो ॥१॥

रात भग्न रही है पति से आकर कह दे । तब तक हे सजनी तू राज सजा और पोशाक से शरीर को सजा दे। इसम तनिक भी देर न कर। प्रीतम को आलिङ्गन करके ग्रहण करना चाहिए। उसका अपराधमुक्त धन्य है। स्त्रियों को सन्तान भ द नहीं है। हे रजनी उन्हें सिखा मैं उनके चरण छू लूँ ॥२॥

पृष्ठ ४३

मन का साफ नैनों का सजीला और हृदय का गम्भीर मृदु भाषी हाथ का सच्चा पाप से रहित वचन का सच्चा रस का सच्चा हृदय का उदार हाथ का ढीला करना रहने वाला मनाने का सच्चा गुण-गुण मन्नेवाला ऐसा पुरुष ब्रह्मा ने अति परिश्रम स बनाया है इसम अधिक और भू मा पुरुष का क्या है ? ॥४॥

पृष्ठ ८४

धातु में दर्प करे अपने मुह अपनी बड़ाई करे। हर किसी से मिलना का दम्भ भरे। सब कामों से असंगति प्रकट करे और अपने को बड़ा चतुर समझे, परस्पर आपसमें हो दूसरे को बुरा कह कड़ुए वचन बोले। जगत्प्रसिद्ध चाणक्य यह राजनीति की शिक्षा देते हैं कि यह अधम सेवक का चिह्न है। ऐसे सेवक कदापि राजा का यहाँ रहना चाहिये ॥४॥

सातवाँ दृश्य

पृष्ठ ५

हे महाराज युद्ध के लिए आइये।

हे युद्ध के इच्छा रण में जूझकर यश प्राप्त करो।

पृष्ठ ७८ ७६

हे शत्रु अपना मन से, यह राजपूत देता है। यह हो धरती में गिर गया पीव रकाब में रह गया और योधे युद्ध करने लगे।

जो गन्ध नहीं सुहाता, शत्रु का संहार करता है अपनी स्त्री को दगता है उसकी आयु कम नहीं।

भगवतिह बाणों की आवाज सुनकर जिसकी टेढ़ी भौंहें चढ़ जाती हैं हे कुमारी पर मृत्युञ्जय है।

प्याणों में प्रधान पुत्र है अमर पुत्र हुआ है पति न पाते हुए, सिर साथ भग लिया।

बिना सिर के कबन्ध ही दल में बढ़ता है और कलह करके गिरता है। ऐसे वीरों के नाम को लेकर योधा तलवार बाँधते हैं।

सोरठ

हिम्मत से कीमत है बिना हिम्मत कीमत नहीं। यों रद्दी कागज़ के समान कोई आदर नहीं करता।

नर नक्षत्र के समान होते हैं जो जगत् के सिर पर शोभाय मान रहते हैं।

शंकर की छवि मन में छा रही है।

सिंह की खाल जिनका भूषण और हाथी की खाल वस्त्र है भस्म तन में लगी है कपालों की माला गले में है मस्तक में चन्द्रमा शोभायमान है जैसे बादलों में बिजली। पार्वती के साथ अर्धांग बन गंगा को मग लिये दल सहित बैठे हैं।

हे गजमुख पुत्र भूप भवानी जय हो। जिनके प्रबल प्रताप से पृथ्वी स्थिर है जिनसे प्रबल भुजबल से शत्रु-सेना हार गई है जिनके नाम से धरती धमकती है वे तलवार के धनी गंभीर अमरसिंह अमर हुए।